चन्दामामा
फरवरी १९६२
50

फरवरी १९६२

विषय - सूची




एक प्रति ५० नये पैसे    वार्षिक चन्दा रु. ६-००

चित्र तारकाओं का प्रिय
रेमी पाउडर
Remy
BORATED TALCUM POWDER
Aykas

## फरवरी १९६२

"चन्दामामा हिन्दी के पाठकों के लिए एक अनमोल मोती है। इसके मुख-पृष्ठ देखकर मन खुश हो उठता है। इसकी सरस एवं मधुर भाषा पाठकों को बरबस अपनी ओर आकर्षित करती है। मुझे इस पत्रिका के फोटो परिचयोक्ति स्तम्भ से विशेष रुचि है। अपनी सुरुचिपूर्ण सामग्री के कारण ही चन्दामामा पाठकों की एक लोकप्रिय पत्रिका सिद्ध हुई है।"

**नन्दकिशोर चौधरी, बैतूल**

मेरा मत है कि "चन्दामामा" की भाषा बहुत सरल है। "हिन्दी चन्दामामा" में हर मास पढ़ता हूँ। इस में शिक्षाप्रद कहानियों के अलावा महान पुरुषों के चरित्र भी दिये जाते हैं। ये मुझे बहुत पसन्द हैं। मैं यह सोचता हूँ कि "चन्दामामा" हर हफ्ते मुझे मिले।

**आर. ए. शेठ, नवीलगाँव**

चन्दामामा में सुन्दर चित्र और कहानी पढ़कर मन आनन्द से भर उठता है। काश यह साप्ताहिक पत्रिका बन पाती।

**बनवारी लाल, औगस**

मैं चन्दामामा की चार साल से पाठक हूँ। मैंने इतनी रोचक और शिक्षाप्रद पत्रिका अभी तक नहीं देखी। इसके चित्र बड़े लुभावने होते हैं। कहानियाँ पढ़ते-पढ़ते छोड़ने का मन नहीं करता। मैं यही चाहती हूँ कि चन्दामामा हमेशा उन्नति करती रहे।

**नलिनी मेहरोत्रा, इलाहाबाद**

मैं "चन्दामामा" लगातार ६ महीने से पढ़ता आ रहा हूँ। आपकी पत्रिका भारत की सर्वश्रेष्ठ पत्रिका है। इसकी धारावाहिक कहानियाँ, फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिताएँ तथा और मनोरंजक कहानियाँ विशेषकर मेरा मन मोह लेती हैं। इस पत्रिका को मैं ही क्या, मेरे घर के सभी इसे पढ़ना पसंद करते हैं। "रामायण" नाम की धारावाहिक कहानी, हमारा विशेषकर मनोरंजन कर रही है। आशा है, आप इसे आखिर तक प्रकाशित करते रहेंगे।

**मनोहरलाल, इलाहाबाद**

"चन्दामामा" एक अति लोकप्रिय मासिक पत्रिका है। अगर कोई दूसरी पत्रिका इससे ईर्ष्या करने लग जाय तो वह स्वाभाविक होगा। वस्तुतः, इसके रंगबिरंगे चित्र (जिसके लिए जिम्मेदार हैं शंकर, चित्रा आदि), कागज़, मनमोहक अक्षर अन्य किसी भी पत्रिका में सुलभ, जहाँ तक मेरा ख्याल है, नहीं हैं। इसके लिए 'चन्दामामा' के प्रकाशन विभाग से संबंधित अधिकारी प्रशंसा के काबिल हैं।

**त्रिनोद कुमार मिश्रा, जमशेदपुर**

चन्दामामा वह पत्रिका है, जो अपने दैवीय प्रकाश से बड़े-बूढ़े सभी का मन मोह लेती है। चन्दामामा के अन्तर्गत जब बच्चा तस्वीरें देखता है तो उसे अपने प्राचीन पुरुषों की याद आ जाती है और वह भी उसी चित्र के अनुसार बनने में अपना गौरव समझता है।

**मनपालसिंह जैन, बड़ौत**

हमें उत्तम सेवा का अवसर दीजिए

# चन्दामामा

संचालक: चक्रपाणी

"चन्दामामा" में हम प्रायः कविता नहीं दे पाते हैं।

मगर कुछ महीनों से हम कुछ गेय कथायें धारावाहिक रूप से देते आये हैं।

ये गेय कथायें काफ़ी जनप्रिय भी हुई हैं। अभी "दक्षयज्ञ" समाप्त हुआ है। और अब हम इस अंक से एक और धारावाहिक गेय कथा प्रारम्भ कर रहे हैं।

आशा है, यह भी पाठकों की अभिरुचि व प्रशंसा का पात्र बन सकेगा।

वर्ष: १३ फरवरी १९६२ अंक: ६

# भारत का इतिहास

धीमे धीमे भारत में आर्य फैलते गये। नये नये परिवर्तन होने लगे। कहीं कहीं गणतन्त्र अवश्य थे, पर राजतन्त्र ही अधिक थे। राज्य बढ़ते बढ़ते साम्राज्य बन गये। इस तरह के चार साम्राज्य थे— अवन्ती, वत्स, कोशल, मगध, जो प्रसिद्ध थे।

अवन्ती की राजधानी उज्जयिनी थी। यह मालवा देश में है। वत्स की राजधानी कोशाम्बी, अलहाबाद के पास है।

उज्जयिनी के राजा प्रद्योत की लड़की वासवदत्ता को वत्स का राजा उदयन उठा ले गया था, इसकी कथा हम पहिले ही पढ़ चुके हैं। कोशल साम्राज्य की राजधानी अयोध्या थी।

मगध आजकल के बिहार का दक्षिण प्रान्त है। वैदिक समय में मगध का बलाढ्योंने परिपालन किया था। ईसा के छठी शताब्दी पहिले बिम्बसार ने अपने राज्य का खूब विस्तार किया। बिम्बसार बुद्ध का समकालीन था।

बुद्ध के निर्वाण के ७० वर्ष पूर्व पन्द्रह वर्ष की अवस्था में उसका पट्टाभिषेक हुआ था। कहा जाता है कि बुद्ध का निर्वाण ४८३ ई. पू. में हुआ था।

बिम्बसार ने अंग देश (पूर्वी बिहार) को पराजित किया। कोशल, वैशाली की राजकुमारियों से उसने विवाह किया। यद्यपि उसकी राजधानी गिरिव्रज थी, पर उसने राजगृह का भी निर्माण किया।

वर्धमान महवीर ने जैन मत और गौतम बुद्ध ने बौद्ध मत का इसी के समय में प्रचार किया। कहा जाता है कि उसके लड़के अजात शत्रु ने बिम्बसार की बुढ़ापे में हत्या कर दी थी।

## ४. मौर्य साम्राज्य

अजातशत्रु के राज्य काल में ही शत्रुओं का भय अधिक हो उठा। चूँकि उसके मन्त्री बहुत चतुर थे, इसलिए उसकी विजय हुई। इन लोगों की कृपा के कारण ही गंगा और सोन नदी के संगम पर पाटली ग्राम में निर्भेद्य दुर्ग बनाया गया, बाद में इसका नाम पाटलीपुत्र पड़ा। यह चार शताब्दियों तक भारत का महानगर कहलाया गया। बुद्ध और महावीर, अजातशत्रु के राज्य के आरम्भ में दिवंगत हुए।

महावीर के पिता का नाम सिद्धार्थ था। माता का नाम त्रिशल था। ये तीनों वैशाली और मगध के राज वंश थे। महावीर ने यशोदा नाम की कन्या से विवाह किया। कुछ दिन गृहस्थाश्रम में रहकर, उन्होंने तीस वर्ष की आयु में सन्यास ले लिया। बारह वर्ष तपस्या की। आखिर उन्होंने "केवल ज्ञान" प्राप्त किया। इनका नाम जिन भी था। इसलिए उनके मतावलम्बियों को जैन कहा जाता है। इन्होंने तीस वर्ष तक अपने धर्म का जगह-जगह प्रचार किया। दक्षिण बिहार में पावा नामक स्थल पर, बहत्तर वर्ष की उम्र में उन्होंने निर्वाण प्राप्त किया। इनका निर्वाण बुद्ध के निर्वाण से पहिले ही हो गया था। बुद्ध की कथा हम जानते ही हैं।

अजातशत्रु के लड़के का नाम उदायी था। उसके बाद अनुरुद्ध मुन्ड और नागदास ने क्रमशः राज्य किया। ये सब पितृ हन्तक थे। नागदास को लोगों ने भगा दिया था, उसकी जगह शिशुनाग नामक मन्त्री को राजा बनाया था।

शिशुनाग के बाद कालाशोक (काकमणी) ने पाटलीपुत्र को शाश्वत रूप से अपनी

राजधानी बनायी। उसके राज्य के दसवें वर्ष में बुद्ध के निर्वाण के सौ वर्ष हो गये थे। तब इसकी हत्या की गई। इसके बच्चे थे। पर उनमें से किसी को राज्य न मिला। मगध का सिंहासन शैशनागों से नन्द वंश के हाथ आ गया।

पहिला नन्द कौन था। निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता। कुछ का कहना है, शैश नागों की शूद्र स्त्री का लड़का था। कुछ का कहना है कि नाई से पैदा हुआ किसी वेश्या का लड़का था। इसके बहुत-से प्रमाण हैं कि नन्द ने अनेक क्षत्रियों का संहार करके अपने साम्राज्य को दृढ़ कर लिया था। ग्रीकों ने लिखा है कि सिकन्दर के समय में, व्यास नदी के इस तरफ़ के लोग, सब नन्द के साम्राज्य में थे। इसी नन्द का नाम महापद्म नन्द, महापद्मपती नन्द भी थे। ये नाम उसकी असंख्य सेना के द्योतक हैं। बौद्ध ग्रन्थों में उग्रसेन का नाम भी है।

नन्द वंश के नौ व्यक्तियों ने मगध का परिपालन किया। एक के बाद एक ने राज्य किया। इनमें आखिरी धन नन्द अत्याचारी था। अपार धन इकट्ठा करने के लिए उसने लोगों पर कर थोपे। जनता ने विद्रोह किया।

इसलिए ही नन्द वंश का नाश हुआ और चन्द्रगुप्त लोगों का नेता बना। चन्द्रगुप्त के साथ मगध साम्राज्य के मौर्य चक्रवर्ती बने।

नन्दों का नाश करके मगध के सिंहासन को चन्द्रगुप्त को देने में कौटिल्य (चाणक्य) नामक एक ब्राह्मण ने सहायता दी। वह ब्राह्मण तक्षशिला का था।

# पार्वती - परिणय

## प्रथम अध्याय

उत्तुंग शिखर लिए है बिलसित उत्तर में
दीख रहा नगराज हिमालय कितना भव्य
छू रहा यह पूर्व पश्चिमी दिशाएँ
दीख रहा ज्यों भुवि के मापदंड सा।

दुग्ध-धवल शुभ्र नगाधिपति
भाता आँखों को, लगता मनमोहक
चोटियाँ हैं लाँघ रहीं मेघों को
मिल रहीं आकाश के तारों को।

यह पर्वत है पटी हुई
रत्नों औ' औषधियों से
यह है भारत का रक्षक
यह है आन, शान।

पर्वत होंगे धरती पर कितने ही
पर है नहीं कोई इसके समान
काँति की किरणें दीप्त हो रहीं यों
हँस रहा नगराज ज्यों मस्त हो।

भगीरथ ने की तपस्या यहीं
उतारने धवलगंगा को अवनि पर
इंद्र ने सिखाया यहीं चंद्र को
मानसरोवर में तिरना, तैरना

हिमालय के इन शिखरों पर
निवास है ऋषि-मुनियों का
संध्या की शांत बेला में यहाँ
विचरती देवकन्याएँ युगलों में

मस्त हाथी झूमते फिरते
भिड़ते देवदार वृक्षों से
टकराते शिलाओं से, दूर करते
यों बदन की मलिनता को

किन्नरी हैं गायक यहाँ के
गूँज रहा स्वर इनका दिक्‌दिक्‌ में
गूँ रहीं दिशाएँ मधुर स्वर से
बह रहा पवन मधुरिमा की लहरें लिए

जंतु हैं चामरधारी कितने ही यहाँ
हिलाते-डुलाते पूँछ अपनी बारंबार
देख यह लगता आद्रिराज को
पंखे चल रहे विश्राम देने उनको

हिमालय-अधिपति हैं हिमवंत
है इनकी संपदा अपार
रत्नों व औषधियों की खान है
यह गंगनचुम्बी हिमालय

हिमवंत हैं विवाहित
मेनका सुन्दरी है पत्नी इनकी

इनका है सुपुत्र एक
जिसका नाम है मैना

दक्षयज्ञ में हुई दग्ध वह सती
शीलवती वह जन्मी अब बन पुत्री
मेनका-हिमवंत के यहाँ
उनके पुण्य-फल के रूप में

जन्मी जब यह नवजात शिशु
लगी चलने मंद मंद बयार
दिक् दिक् में बजने लगे तूर्य
बरसी वसुधा पर फूलों की वर्षा

माता-पिता ने प्यार से
रखा है नाम इसका उमा
पर पुकारी गयी वह
पार्वती, हैमवती के नाम से

रहती सदा माँ की गोद में
पल रही अति लाड-प्यार से
है मिला प्यार माँ-बाप का
रही वह बड़े चैन से

पार्वती है अनुरक्त
शिव पर बचपन ही से
खेल-कूद में भी रहती उसे
सदा ध्यान शिव ही का

विचरती सहेलियों को लिए
खेलती नाना खेल गंगा तट
वीणा लिए मधुर गान गाती
करती शिव-स्तुति मधुर स्वर में

बनी निपुण सकल कलाओं में
डोल रही यौवन की उमंगों में
खिले फूल-सी, हरी लता-सी
दीखती मनोहर, मनोमुग्धकारी

मराल ने सिखाया चलना उसे
पायलों की झंकार है सुरीली
छू रहे बारंबार उस पद-पद्म को
सिखाया जिसने उन्हें बजना

अरुण अधर पर उसके
व्याप्त रहती मंदहास अतिमधुर
हरे पत्तों पर खिलती कली सी
सीप में छिपी मोती-सी

अति सुन्दरी पार्वती ओ
दिखती ज्यों चित्रित चित्र हो
प्रभातवेला में विकसित फूल हो
खिल रहा उसका यौवन- सुमन हो

यौवन की उमंगों से भरी
पुत्री पार्वती को लख
पड़े सोच में हिमवंत
हो किससे इसका ब्याह

पधारे मुनिवर नारद सानंद
स्वर्ग लोक से उस सुदिन
समुदित आये वे यहाँ
हिमवंत के मंदिर में

हिमवंत ने किया
सहर्ष स्वागत उनका
किया स्वागत उनका
मनःपूर्वक प्रमुदित हो

पुत्री से कहा हिमवंत ने
आशीर्वाद पाने मुनिवर से
फिर कहा नारद से यों
"मुनिवर, आप हैं सर्वज्ञ

कहिए कृपया वह है कौन
जो योग्य वर मेरी पुत्री के
हे देवमुनि! कह यह
कीजिए मुझपर कृपा"

सुन यह मुनिवर नारद ने
लिया हाथ पार्वती का हाथ में
लगे देखने उसकी हस्त-रेखाएँ
रह गये चकित औ' बोले यों

"हे कन्या तुम्हारी भाग्यवती
रहेगी सदा जीवन में सुखी
बनेगी स्वर्गंगा नदी सौत
तुम्हारी इस पुत्री की

होगा सुपुत्र पार्वती का
होगी सूरत जिसकी हाथी की
फिर होगी माता और एक पुत्र की
होंगे जिसके छह सिर

परिणय होगा पुत्री पार्वती का
वैभवशाली, संपन्न पुरुष से
रहेगी चैन से गेह में यह
होंगे नहीं जहाँ सास-ससुर

दीखता है सितारा इसका बुलंद
होगी यह अन्नपूर्णा, अद्वितीया
बनेगी सुपुत्री हे हिमवंत,
चौदहों भुवनों की स्वामिनी

है अब यह निश्चित, निस्संदेह
होगी पार्वती अर्धांगिनी शिव की
धन्य हो हे अद्रिराज
हो भाग्यवान दक्ष से भी

वचन कह यों चले
नारदमुनि गाते-बजाते
सुन यह खिलखिलाकर
हँस पड़ीं सहेलियाँ पार्वती की।

[७]

[मायादण्डी मान्त्रिक कालभैरव के समक्ष होम करने लगा। इस बीच मल्लापुर के राजा का अंगरक्षक दो सैनिकों को लेकर पहाड़ के पास आया। वहाँ उन्हें केशव का वृद्ध पिता दिखाई दिया। सैनिकों ने उससे पहाड़ पर रास्ता दिखाने के लिए कहा। वह पहाड़ पर चढ़ने लगा। बाद में—]

एक ऊँची जगह पर पत्थरों के पीछे से जयमल पहाड़ के नीचे देख रहा था। उसने देखा कि चार आदमी पहाड़ पर आ रहे थे। गुफा के अन्दर मान्त्रिक कालभैरव का अलंकरण करके पास केशव को बिठाकर, मन्त्र पढ़कर हवन कर रहा था। यह कहकर केशव को कालभैरव उत्तेजित करने जा रहा था और उसको उस समय देखना खतरनाक था, यह कहकर उसने जयमल को गुफा से बाहर भेज दिया था। परन्तु जयमल जब जब मौका मिलता तो अन्दर झाँककर देखता कि क्या हो रहा था।

जयमल यह देखना चाहता था कि कालभैरव की प्रेरणा पर केशव क्या करने जा रहा था। वह जानता ही था कि मान्त्रिक केशव से भयंकर घाटी का मार्ग और वहाँ की धनराशि के बारे में जानना

चाहता था। इसका भेद जानने के बाद मान्त्रिक केशव को मार भी सकता था... जयमल्ल को यह सन्देह था।

इसलिए उसे जानना था कि भयंकर घाटी का क्या मार्ग था। जब केशव कालभैरव के वश में होगा और जो कुछ वह तब कहेगा, बाद में उसे याद न रहेगा। इसलिए उसे सुनना होगा, और उसकी बातों को याद रखना होगा।

जयमल्ल जब यों सोच रहा था, तो उसने देखा कि उन चारों में से, जो पहाड़ पर चढ़ रहे थे, एक जंगल में भागा जा रहा था। और बाकी तीन मूर्तियों की तरह बिना हिले डुले खड़े थे।

जयमल्ल ने पीछे मुड़कर देखा कि उन तीनों को किस चीज़ ने आश्चर्य में डाल दिया था। गुफ़ा में से काला धुँआ ताड़ के पेड़ की तरह आकाश में यकायक उठा।

जयमल्ल ने सोचा कि उस धुँये को देखकर ही वे चकित हो उठे थे—जयमल्ल ने अनुमान किया। अब क्या किया जाय? ब्रह्मदन्डी मान्त्रिक से क्या यह कहा जाये? कहूँ... या न कहूँ!

इस बीच राजा के अंगरक्षक द्वारा पहाड़ से भेजा हुआ सैनिक ब्रह्मपुर की ओर तेज़ी से भागा जा रहा था। सौभाग्य से उसको रास्ते में घोड़े पर एक बूढ़ा दिखाई दिया। सैनिक ने तलवार दिखाकर, डराकर उस बूढ़े से उसने घोड़ा ले लिया। उसपर स्वयं सवार हो वह नगर की ओर जल्दी जल्दी चला गया।

किले के मुख्य द्वार को पार करते ही सैनिक, "महाराज, महाराज..." चिल्लाने लगा। यह सुनते ही नव नियुक्त सेनापति महल से बाहर आया। "अबे, बन्द कर

CHITRA

"यह है कहने का तरीका। एक ही साँस में तुमने सब कह दिया। अब मुख बन्द करके मेरे साथ आओ।" कहता सेनापति सैनिक को साथ लेकर राजा के पास गया।

राजा और राजगुरु और सेनापति ने सब सुनकर सैनिक से पूछा—"यह बूढ़ा कौन है?"

"वह हमें जंगल में दिखाई दिया था। उसके हाथ में बड़ी तलवार भी थी। उसने बताया कि जंगल में वह कन्द मूल खाकर जिन्दगी बसर कर रहा था।" सैनिक ने कहा।

"गुफा में से धुँआ आने का कारण मान्त्रिक ही क्यों है? शत्रु सैनिक क्यों नहीं हो सकते?" राजगुरु ने पूछा।

"मान्त्रिक ही है, उस बूढ़े ने यही बताया है। उसने मान्त्रिक को कई बार देखा है। वह उसकी गुफा भी जानता है।" सैनिक ने कहा।

"क्या विचित्र जन्तुओं के बारे में वह बूढ़ा कुछ जानता है?" राजा ने प्रश्न किया।

"वह विचित्र जन्तु मान्त्रिक का बनाया हुआ है, ऐसा उस बूढ़े का विश्वास है,

मुख। तुम महाराजा को ही पुकार रहे हो। क्या तुम पागल हो गये हो? क्या बात है?"

सैनिक यह सुन घबरा उठा। "सेनापति जी, मुझे राजा के अंगरक्षक ने भेजा है। पहाड़ की एक गुफा में से काला धुँआ आकाश की ओर निकल रहा है। गुफा में एक मान्त्रिक है। उसी ने भूतपूर्व सेनापति को मारा था, एक बूढ़े ने बताया है। यह राजा को बताकर, कुछ और सैनिकों को बुलाकर लाने के लिए कहा है।"

पर उसने उस विचित्र जन्तु को नहीं देखा है, वह कह रहा था।" सैनिक ने साफ़-साफ़ कहा।

"गुरु जी, अब क्या किया जाये!" राजा ने पूछा।

राजगुरु ने एक क्षण सोचकर कहा—"इसमें कोई सन्देह नहीं है कि उस पहाड़ की गुफ़ा में मान्त्रिक ही है। यदि शत्रु सैनिक होते तो इतनी मूर्ख नहीं होते कि गुफ़ा में से धुँआ आने देते। यदि वे ऐसा करते तो उनका रहस्य औरों को मालूम हो जाता। इतने बे-अक्ल नहीं होंगे दुश्मन। इसलिए मेरा अनुमान है कि वह मान्त्रिक बड़ा हवन कर रहा है, उस गुफ़ा में। नहीं तो इतना सारा धुँआ एक साथ बाहर नहीं आ सकता। हमें उसे जीते जी पकड़ना होगा।"

"वह तो दुष्ट मान्त्रिक है न! क्या हम चुपचाप जाकर उसे पकड़ सकते हैं!" राजा ने निरुत्साहित होकर पूछा।

"वह सब मुझपर छोड़ दीजिये। मैं मन्त्रशास्त्र जानता हूँ, पर अभी तक मैंने इसका उपयोग नहीं किया है। उस दुष्ट को कैसे वश में करना है, यह मैं

जानता हूँ।" कहकर राजगुरु ने सेनापति की ओर मुड़कर कहा—"सेनापति, बस अच्छे सैनिकों को फौरन जाने के लिए तैयार रखिये।"

अभी दस मिनिट भी न हुए थे कि राजगुरु, सेनापति और सैनिक घोड़ों पर सवार होकर नगर छोड़कर जंगल के रास्ते पहाड़ की तरफ़ निकल पड़े।

अंगरक्षक के साथ जो सैनिक गया था, वह आगे आगे उनको रास्ता दिखा रहा था और पहाड़ पर जो कारनामें किये थे, सुना रहा था।

जयमल ने, जो गुफ़ा के पास पहरा दे रहा था, राजगुरु और सैनिकों को देखा। वह जान गया कि जो सैनिक कुछ देर पहिले भाग गया था, इन सब को साथ लाया था। गुफ़ा से बाहर जो धुँआ उठ रहा था, उसी की वजह से मान्त्रिक के बारे में वे जान सके। वह भयंकर घाटी का मार्ग जानने के प्रयत्न में इतना संलग्न हो गया था कि भूल ही गया कि उसके गले में रस्सी पड़ रही थी।

जयमल झट मुड़कर गुफ़ा के पास गया। अन्दर त्रासदण्डी की आवाज़, जो घंटे की तरह गूँज रही थी, यकायक रुक गई। तुरत केशव की आवाज़ सुनाई दी। वह कह रहा था, विन्ध्या के जंगलों के पार एक घाटी है। वह ही भयंकर घाटी है। उस घाटी में एक जगह ऊँचा पीपल का पेड़ है। उसके नीचे एक बाम्बी है—" त्रासदण्डी खुशी में जोर से न मालूम क्यों हँसने लगा। "कालभैरव, बताओ, बताओ।" उसने केशव के कन्धे पर मन्त्रदण्ड रखा।

"वह वृक्ष पूर्णिमा के दिन फल फूलों से भर उठता है। शेरों के राजा को मारकर, उसका चर्म निकालकर, उसे..." केशव कहता कहता रुका। हाथ से गला पकड़कर कांपता कांपता, आगे पीछे झूमने-सा लगा।

केशव के हाव भाव देखकर त्रासदण्डी जोर से गरजा—"कौन है वह! मुझपर ही कोई मन्त्र का उपयोग कर रहा है। अरे उसने कालभैरव का मुख ही बन्द कर दिया है।" उसने हुँकार की। जयमल गुफ़ा के द्वार से भागा और उसने पहाड़ के नीचे की ओर देखा। उसने देखा कि जो घोड़ों पर सवार होकर आये थे, उनमें

से एक नीचे उतरकर, कमंडल में से पानी निकालकर पत्थरों पर छिड़क रहा था। वह राजगुरु था।

जयमल्ल को डर लगा कि ब्रह्मदण्डी मान्त्रिक के साथ वह और केशव भी पकड़े जायेंगे। उसने यह भी अनुमान किया कि उन लोगों में भी कोई मन्त्रवेत्ता था।

"गुरु गुरु..." जयमल्ल गुफा की ओर भागा। "ब्रह्मपुर के सैनिक पहाड़ पर आ रहे हैं।" उसने मान्त्रिक से कहा।

मान्त्रिक ने दान्त कटकटाये। "यदि वे सैनिक हैं तो हमें क्या भय है, शिष्य! उनके साथ कोई तुच्छ मान्त्रिक भी मालूम होता है। उस तुच्छ को मैं कालभैरव पर बलि चढ़ाये बिना नहीं छोड़ूँगा। उसने उसके उपासक का ही मुख बन्द कर दिया।

"उस तुच्छ मान्त्रिक के मुख बन्द करने से पहिले क्या कालभैरव ने सब कुछ बता दिया है गुरु!"

तुरत ब्रह्मदण्डी की भौंहें चढ़ीं। उसने सन्देह करते हुए जयमल्ल को देखकर पूछा—"क्या तुम छुपे छुपे जो कुछ गुफा में हो रहा था, देख रहे थे!"

"यह क्या गुरु जी, आपने तो मुझे बाहर रहने के लिए कहा था न! क्योंकि मैं आपकी आज्ञा का पालन कर रहा था, इसलिए मैं ब्रह्मपुर के उन सैनिकों को देख सका। यदि गुफा में ही देखता रहता तो पहाड़ पर चढ़नेवाले इन सैनिकों को कैसे देख पाता!" जयमल्ल ने कहा।

तब तक केशव की हालत ऐसी थी, जैसे बेहोश हो। वह यकायक उठा। उसने चारों ओर देखा—"मैं कहाँ हूँ! मैं कौन हूँ! मान्त्रिक उसके पास गया।

उसका कन्धा सहलाते हुए उसने कहा—"तुम केशव हो। तुम महा मान्त्रिक त्राक्षदण्डी की गुफ़ा में हो। समझे? वह देखो उपासकों का कल्पद्रुम ... उन्मत्त भैरव।"

केशव ने कालभैरव की मूर्ति देखकर कहा—"कालभैरव की आँखों की कान्ति कुछ कम हो गई-सी मालूम होती है।" उसने पीछे मुड़कर जयमल्ल से पूछा—"सब विचित्र-सा लगता है। क्या हुआ जयमल्ल।"

जयमल्ल कुछ कहने जा रहा था कि मान्त्रिक ने उसे रोककर कहा—"कुछ नहीं केशव, मैं जरा असावधान था। किसी तुच्छ मान्त्रिक ने मुझ पर वार किया है। तुम न डरो। मैं उसे कालभैरव को बलि देकर रहूँगा।"

"गुरु, अब यहाँ समय बिताने से काम न चलेगा। शत्रु हमें खोजते पहाड़ पर चले आ रहे हैं। कहीं भाग निकलें। मार्ग दिखाइये।" जयमल्ल ने कहा।

"भाग जायें! यह महा मान्त्रिक त्राक्षदण्डी शत्रुओं से डरे और भाग जाये! क्या कह रहे हो, शिष्य! कालभैरव मेरी रक्षा करेंगे ... मैं यहीं से उस मान्त्रिक को मार दूँगा, जिसने मुझपर हमला किया है। उसको ही उसका सबक सिखाऊँगा। तुम दोनों जाकर कहीं दूर छुप जाओ।" कहता त्राक्षदण्डी, कालभैरव की मूर्ति की ओर चला।

केशव ने अपने धनुष बाण ले लिये। उसके बाद जयमल्ल और वह गुफ़ा से बाहर निकलकर पत्थरों के पीछे छुके छुपे, हाथियों के झरने की ओर भागने लगे।

(अभी है)

# शापग्रस्त भगवान

विक्रमार्क ने हठ न छोड़ा। पेड़ के पास आकर, शव उतार कर कन्धे पर डाल हमेशा की तरह चुपचाप श्मशान की ओर चलने लगा। तब शव में स्थित बेताल ने कहा—"इस आधी रात के समय, जब कि तुम मुलायम मोटे मोटे गद्दों पर आराम से सो सकते थे, यदि तुम कष्ट झेल रहे हो, तो अवश्य किसी ने तुम्हें शाप दिया होगा, क्योंकि पुण्यात्मा का शाप भगवान को भी लगता है। यह दिखाने के लिए तुम्हें एक छोटी-सी कहानी सुनाता हूँ। सुनो।" उसने यों कहानी सुनानी शुरु की।

दक्षिण में समुद्र के पूर्वी तट पर एक देवालय था। उसका पुजारी एक ब्रह्मचारी था। वह राजा से बिना एक कौड़ी चाहे, या लिये, पूजा, अर्चना, अभिषेक, उत्सव आदि किया करता था।

## बेताल कथाएँ
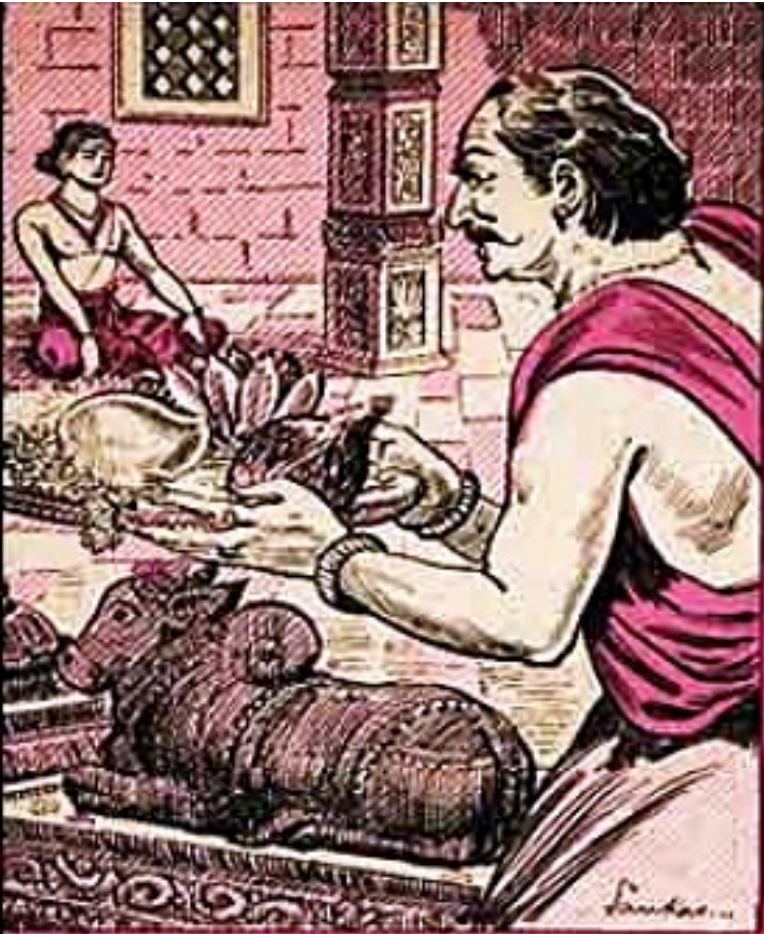
इस पुजारी का कोई न था। आलय ही उसका घर था। भगवान ही माता पिता थे। यदि कोई ग्रामवासी आकर कुछ नैवेद्य देता, तो पेट-भर खा लेता। पूजा आदि के समय वह आलय में ही तपस्या किया करता। उसने अपना सारा जीवन उस मन्दिर के आराध्य को सौंप दिया था। उस पुजारी को हर कोई महात्मा समझा करता। जिनके बच्चे न होते, या जो कष्टों में होते, या जिनका भाग्य साथ न देता— आकर उस मन्दिर में मनौती किया करते। जब इच्छायें पूरी हो जातीं तो वे कभी कभी बहुमूल्य भेंट भगवान को देते, तो पुजारी उन्हें राजा के पास पहुँचा देता।

आलय के समीप एक ग्राम में एक धनी रहा करता था। उसके बच्चे न थे। एक बार वह आलय में आया। उसने मूर्ति का अभिषेक करवाया और मनौती की कि भगवान ने यदि उसे पुत्र दिया तो वह एक सोने का आम उपहार में देगा।

सौभाग्यवश उस धनी की इच्छा पूरी हो गई। उसके अभिषेक कराने के कुछ दिन बाद ही उसकी पत्नी गर्भिणी हुई। कालक्रम से लड़का पैदा हुआ। धनी ने सुनार से एक सोने का आम बनवाया। उसे देने के लिए वह मन्दिर में गया।

उस समय पुजारी पूजा पाठ के समाप्त होने के बाद, ध्यान कर रहा था। धनी ने पूजा द्रव्यों के साथ, सोने के आम को एक थाल में रखकर, पूजारी के पास रखकर कहा—"स्वामी! मैं समुद्र में स्नान करके आता हूँ। मेरे आने पर आप अर्चना करना।" वह स्नान करने चला गया।

परन्तु पुजारी इस तरह ध्यानस्थ था कि न उसने पुजारी का आना देखा, न उसकी बात ही सुनी। उसने पास रखे थाल को भी न देखा, न उसमें रखे सोने के आम को ही।

धनी के सोने के आमवाले थाल के रखने के कुछ क्षण बाद मन्दिर में एक चोर आया।

उस चोर को भी मन्दिर के उस देवता पर अपार विश्वास था। उसका बड़ा परिवार था। जब वह बारह बच्चों और पत्नी का किसी और तरह पोषण न कर सका, तो वह चोरी करने लगा। साधारणतया चोर अपनी शक्ति पर ही निर्भर रहते हैं। पर यह चोर बिल्कुल इस देवता पर निर्भर था। जब चोर चोरी करने निकलता, तो मन्दिर में आकर माथा टेकता और प्रार्थना करता कि जो चोरी वह करने जा रहा था, वह सफल हो, उस पर कोई आपत्ति न आये। उसकी इच्छा पूरी होती रहती। वह सोचता कि वह सब उस भगवान की ही कृपा थी।

उस दिन भी वह भगवान को नमस्कार करने आया था। उसके बच्चे भूख से मर रहे थे। उस दिन रात को वह चोरी करने जा रहा था, इसलिए मन्दिर में वह प्रार्थना करने आया था।

चोर को, मन्दिर में पैर रखते ही, थाल में सोने के आम दिखाई दिया। उसने भगवान को नमस्कार करके कहा—"भगवान, बच्चे भूख से मर रहे हैं। लाचार हो, आज रात चोरी करने जा रहा हूँ। आज आपकी कृपा से यह सोने का आम मिला है। इससे मैं और मेरा कुटुम्ब कई दिन आराम से जी सकेगा। मुझे इस बीच चोरी करने की भी

आवश्यकता नहीं है।" यह कह वह सोने का आम लेकर अपने रास्ते चला गया।

धनी समुद्र में स्नान करके मन्दिर में आया। मन्दिर में घुसा ही था कि उसने देखा कि थाल में सोने का आम न था। वह चिल्लाया—"अरे पुजारी, सोने का आम कहाँ है? क्या इसे कहीं रख दिया है?" तभी पुजारी ने आँखें खोली थीं। "सोने का आम? मैंने तो कहीं नहीं रखा है।" उसने कहा।

"तुम से कहकर ही तो सोने का आम यहाँ रखकर मैं नहाने गया था। अब आकर देखता हूँ कि वह नहीं है। क्या किया तुमने उसको?" धनी जोर से चिल्लाया।

"मैं कुछ नहीं जानता।" पुजारी ने कहा।

धनी क्रुद्ध हो उठा। "मैंने वह आम भगवान को देने का निश्चय किया था। तुम यहाँ क्यों हो? भगवान की सम्पत्ति लेने के लिए ही क्या?" धनी ने कहा।

"मुझे भगवान की सम्पत्ति से क्या काम? स्वामी की अर्चना से ही मेरा जीवन आराम से कट रहा है। स्वामी के प्रसाद से मेरा पेट भर जाता है। सोना चुराकर मैं क्या करूँगा?" पुजारी ने कहा।

"सब चोर इसी तरह बातें करते हैं। जो तुम कहना चाहो, वह राजा के सामने कहना। मैं अभी जाकर शिकायत करूँगा।" कहकर धनी चला गया और उसने जाकर राजा से शिकायत की कि पुजारी ने सोने का आम चुराया था।

राजा ने पुजारी की सुनवाई की। धनी को यूँ ही पुजारी पर दोषारोपण

करने की आवश्यकता न थी। यह सच था कि उसके एक लड़का हुआ था, यह भी सच था कि भगवान को वह सोने का आम भेंट करने आया था।

जब सोने का आम चोरी गया था, तब मन्दिर में केवल पुजारी ही था। वह गरीब था। सोने के लिए वह चोरी कर सकता था। इस तरह कितनी ही चोरियाँ करके जो उपहार राजा को मिलने चाहिये थे, उसने ले लिए थे। इसी वजह से बिना कोई वेतन लिए वह निश्शुल्क भगवान की पूजा कर रहा था।

यह सोचकर राजा ने पुजारी को कोड़ों की सजा दी। जब राज-सैनिक पुजारी को कोड़े लगा रहे थे, तो वह क्रुद्ध हो उठा, राजा पर नहीं, न धनी पर ही, परन्तु उस भगवान पर जिसकी वह इतने दिनों से आराधना करता आया था।

"कह रहे हैं कि जब चोरी हुई, तो मेरे सिवाय वहाँ कोई न था। तब तुम कहाँ थे? सच क्या था, तुम क्यों नहीं कहते? अभिषेक कराने का फल क्या यही है? जो मेरी रक्षा ही न कर सका, उसके लिए मन्दिर की भी क्या आवश्यकता है? तुम और तुम्हारा मन्दिर जा मिले समुद्र में" पुजारी गुनगुनाया।

पुजारी ये बातें कह रहा था कि समुद्र में तूफ़ान आया। भूमि काँप उठी। तूफ़ान का ज्वार भूमि पर आया। जब ज्वार पीछे हटा, तो देखा गया कि वह मन्दिर न था। वह समुद्र में जा मिला था।

जिस पुजारी ने भगवान को शाप दिया था, उससे राजा ने क्षमा माँगी।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर कहा—"राजा! भगवान ने ऐसा क्यों किया? वह देवता महिमावान था, इसलिए ही तो

उसके भक्त में इतनी शक्ति आ सकी, यही अनुमान करना होगा! इतनी महिमावाला देवता क्यों नहीं अपने भक्त की रक्षा कर सका! जो यह न कर सका, उसने भक्त के शाप का शिकार होकर, क्यों उसे मन्दिर भी न छोड़ सका! यदि तुमने इन प्रश्नों का उत्तर जान-बूझकर न दिया, तो तुम्हारा सिर टुकड़े-टुकड़े हो जायेगा।

विक्रमार्क ने कहा—"सब कुछ सोच साचकर भगवान ने ठीक काम किया। वह बेअक्ली का काम न था। यदि पुजारी की रक्षा करनी है, तो भगवान के लिए आवश्यक था कि यह सूचित किया जाये कि चोर कौन था। दोनों ही उसके भक्त थे। पुजारी अकेला था। यदि चोर पर आपत्ति आती, तो तेरह प्राणियों पर आपत्ति आती। दूसरी बात यह कि यदि वह पुजारी की रक्षा में गवाही देता, तो लोग समझते कि वह सब माया थी। यदि वह भक्त के शाप का शिकार हो गया, तो उसकी महिमा और बढ़ती। तीसरी बात यह थी कि देवता के लिए यह आलय प्रतिबन्धक-सा हो रहा था। उनके भक्तों में एक तरह के लोग न थे। उनमें चोर थे। दरिद्र थे, धनी थे। एक का स्वार्थ दूसरे के विरुद्ध था। सबसे बड़ा स्वार्थी राजा था। यह सोच कि जो भेंट भगवान को दिये जाते थे, वे सब उसके थे इसलिए राजा मन्दिर में छोटी-मोटी चोरी के लिए भी बड़ी-बड़ी सज़ा देता। इन सब भेदों का भगवान समन्वय न कर सका। इसलिए भगवान ने अपने मन्दिर को समुद्र में डुबा दिया।"

राजा का इस प्रकार मौन भंग होते ही बेताल शव के साथ अदृश्य हो गया और पेड़ पर जा बैठा।

[२]

दोनों मित्र जब तम्बू में भोजन कर रहे थे, तब उस स्त्री ने, जिसने जाफ़र से शादी की थी, पालकी के परदे हटाकर उन दोनों को देखा। चूँकि वे मित्र थे, इसलिए अत्तफ़ ने मित्र के लिए उसे छोड़ दिया था—वह स्त्री ताड़ गई। उसकी आँखों से आँसू झरने लगे।

जाफ़र अपने नौकर-चाकरों के साथ निकला। जाफ़र ने पालकी के पास आकर कहा—"प्रेयसी, तुमने तो हृदय के सचमुच टुकड़े कर दिये।"

उसने जाफ़र से कहा—"मैं आपकी प्रेयसी नहीं हूँ। अत्तफ़ ने आपके लिए मुझे दिया है। यदि आपका मन निर्मल है, तो मुझे आप उन्हें वापिस दे दीजिये।

"क्या यह सच है?" जाफ़र का दिल धड़-धड़ कर रहा था।

"हाँ, आप मुझे देखकर, उसके पास जाकर रोये-धोये होंगे। वह मित्रों के लिए प्राण तक दे देता है।" उसने कहा।

जाफ़र ज़ोर-ज़ोर से रोने लगा—"तुम मेरी सम्पत्ति नहीं हो, पर तुम्हारी रक्षा का भार मुझ पर है।" उसको तुरत डमास्कस भेज देने में बहुत-सी कठिनाइयाँ थीं। उसका पिता ही बहुत-से प्रश्न करता। अत्तफ़ ने जो कुछ झूट उसके के लिए बोले थे, वे भी सबको मालूम हो जायेंगे। इसलिए अत्तफ़ को बगदाद बुलाकर, उस स्त्री को उसे सौंप देना ही उचित था। जाफ़र बगदाद की ओर चलता गया।
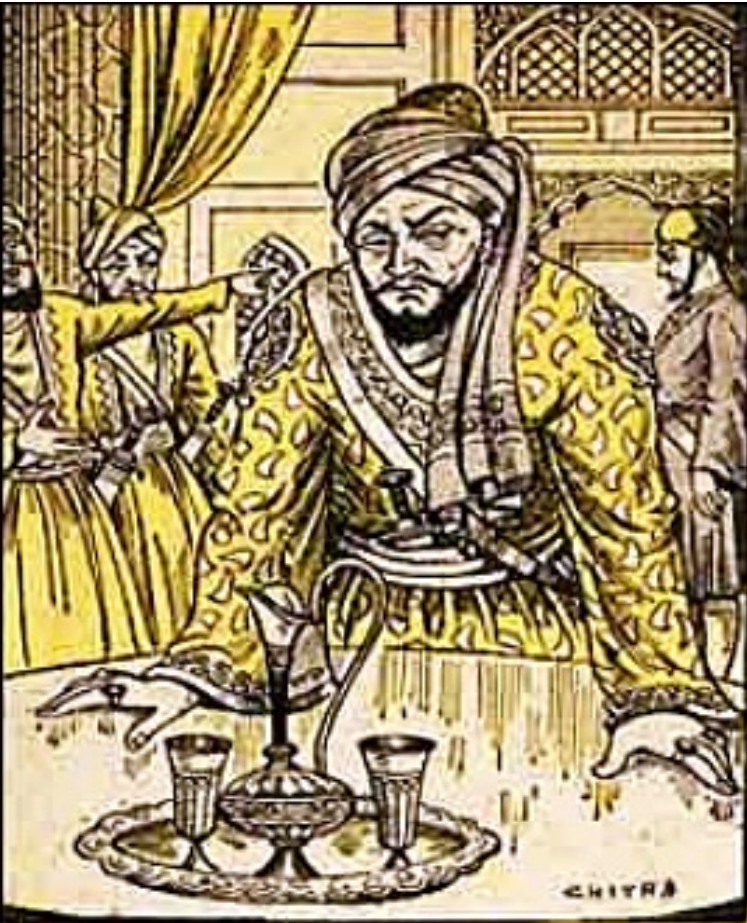
इस बीच बगदाद का खलीफ़ा, अपने किये पर पछ्ता रहा था। वह अपनी गलती अनुभव कर रहा था। जब जब वह सोचता कि उसके कारण ही अच्छे कुल में पैदा हुआ जाफ़र जँगलों में दर दर भटक रहा था, तो उसे बड़ा रंज होता। उसने जाफ़र का पता मालूम करने के लिए चारों ओर लोगों को भेजा। चार महीने बाद खलीफ़ा को खबर मिली कि जाफ़र सपरिवार बगदाद वापिस आ रहा था। खुशी-खुशी खलीफ़ा उसको लिवा लेने के लिए गया, उसे गले लगाकर पूछा—"इतने दिन तुम कहाँ रहे!"

जाफ़र ने उससे अत्तफ़ के बारे में कहा। खलीफ़ा उसकी कहानी सुन विस्मित हुआ। "क्या इतने उदार लोग भी हैं! उसके साथ बड़ा अन्याय हुआ है, जाफ़र उस जैसे स्नेहपात्र को हमें नहीं खोना चाहिए। उसको बुलाकर लाने के लिए आदमी भेजता हूँ।"

जाफ़र ने अत्तफ़ की प्रेयसी के रहने के लिए एक बाग में बने अच्छे बँगले में व्यवस्था की। दासियों को नियुक्त किया। उसके महीने के खर्च के लिए हज़ार दीनारें दीं। उसने स्वयं कभी उस घर में कदम न रखा, पर नौकरों को भेजकर उसका कुशल क्षेम मालूम कर लिया करता। और उनसे कहलाता—"तुम जल्दी ही अपने प्रियतम से मिलनेवाली हो।"

उधर डमास्कस में यह बात फैल गई कि अत्तफ़ खलीफ़ा के वज़ीर जाफ़र का अच्छा दोस्त था। अत्तफ़ के शत्रु राजप्रतिनिधि से चुगली करने लगे—"यह आदमी आपके रास्ते में काँटा है। जाफ़र द्वारा खलीफ़ा से इसने कहलाया है कि

आपको इस पद पर से हटा दिया जाये। रोशनी के रहते ही घर ठीक कर लेना अच्छा है।"

राजप्रतिनिधि की अक्ल जाती रही। उसने अत्तफ़ को पकड़वाया और उसे मौत की सज़ा दे दी। परन्तु कई अक़्लमन्द ने राजप्रतिनिधि को सलाह दी कि वह जल्दबाजी न करे। "बुरे लोग झूट बोल सकते हैं। यदि वह निर्दोष है, तो मन्त्री जाफ़र आपका सर्वनाश कर सकता है। मौत की सज़ा के बारे में उनको मालूम होकर रहेगा ही...."

यह सुन राजप्रतिनिधि डर गया। उसने अत्तफ़ को कैद में डाल दिया। परन्तु कुछ दिनों बाद अत्तफ़ सौभाग्यवश कैद से एक दिन रात को भाग निकला। वह कुछ दिन बड़ी मुसीबतें सहता रहा। उसे न मालूम हुआ कि वह किस तरफ़ जा रहा था। आखिर वह बगदाद जानेवाले काफिले से मिला और एक महीना सफर करने के बाद वह बगदाद पहुँचा।

दो दिन वह बिना भोजन के सारा शहर बिल्ली की तरह घूमा। तीसरे दिन वह एक मस्जिद में जाकर बैठ गया। वह देखने में बहुत गरीब मालूम होता था। कपड़े चीथड़े हो गये थे। वह सूखकर काँटा हो गया था। दाढ़ी बढ़ गई थी। मुख पर रौनक न रह गई थी। आँखें धँस-सी गई थीं। नींद और भोजन न होने के कारण उसे देखते ही नफ़रत-सी होती थी।

थोड़ी देर में उसके सामने एक भिखारी आकर बैठ गया। एक पोटली खोलकर रोटी, शाक, फल और जाने क्या क्या पकवान खाने लगा।

भूख से अत्तफ़ की बुरी हालत हो रही थी—उन पागलों को देखकर वह आँसू

बहाने लगा। भिखारी ने सिर उठाकर उसे देखा।

"यदि तुमने अपने आँसुओं से सारे रेगिस्तान को समुद्र भी कर दिया, तो भी मैं खाने को तुम्हें एक टुकड़ा न दूँगा। परन्तु एक सलाह देता हूँ। खलीफ़ा का मन्त्री जाफ़र रोज दान कर रहे हैं। सुनते हैं अत्तफ़ नाम के किसी व्यक्ति ने उसका बहुत आतिथ्य किया था। इसलिए वह सोकर उठते ही अत्तफ़ को याद करता है। रात को सोने के समय अत्तफ़ को याद करता है। यदि तुमने उसके सामने हाथ पसारे, तो तुम्हारा पेट भर जायेगा।"

अत्तफ़ का सिर चकरा गया! क्या उसका अतिथि सचमुच जाफ़र मन्त्री था! अल्लाह की मेहरबानी की इससे अच्छी मिसाल क्या हो सकती है। अत्तफ़ की जान में जान आई। उसने जाफ़र को एक चिट्ठी लिखी। जाफ़र के घर का पता मालूम करके—उसके घर के बाहर खड़े हिंजड़े से कहा—"मेरा नाम अत्तफ़ है, यह परचा जाकर, जाफ़र को दो।"
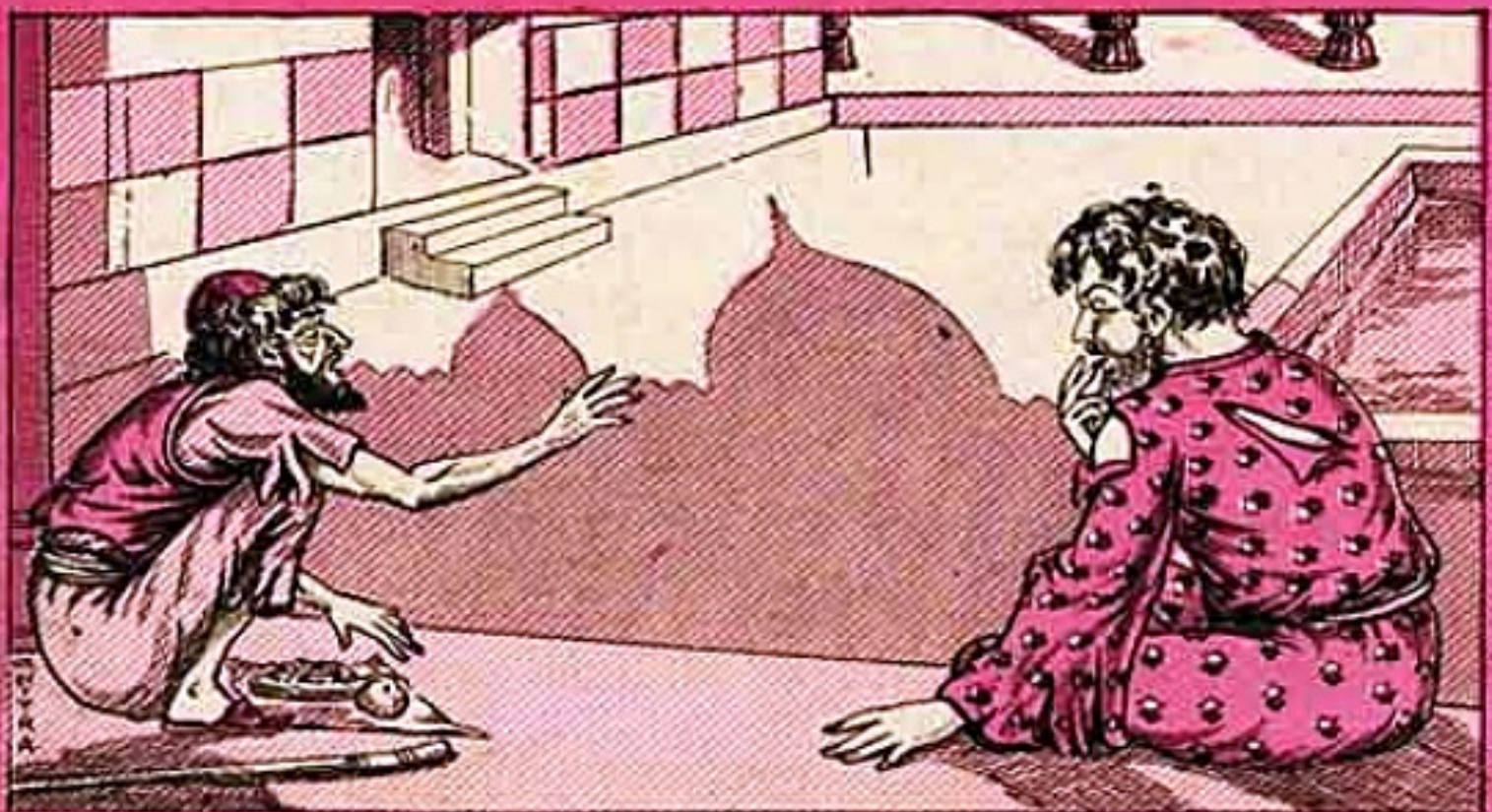
हिंजड़े ने क्रुद्ध होकर कहा—"बदमाश, क्या कहा, अत्तफ़ पर तो हुज़ूर जान देते हैं। समझे? तुम अपना नाम वह बताते हो?" उसने ज़ोर से अत्तफ़ के चेहरे पर बेंत मारी। अत्तफ़ नीचे गिर गया। उसका मुँह खून से लथपथ हो गया।

यह एक और नौकर देख रहा था। उसने उसे फटकारा। अत्तफ़ को उठाया। उसका खून पोंछकर उससे पूछा—"तुम्हें क्या चाहिए भाई?"

"यह परचा, मेरे भाई जाफ़र को देना है।" कहकर अत्तफ़ ने चीट दी। नौकर जब उस परचे को लेकर गया, तो जाफ़र बड़े लोगों के साथ बैठा गप्प मार रहा था।

"मैं कौन हूँ, मेरा क्या पद है, क्या यह भी नहीं जानता। पर उसने मेरे लिये क्या नहीं किया? उस तरह के आदमी दुनियाँ में कहीं न होंगे। उसका ऋण मैं नहीं चुका सकता?" जाफ़र जब कह रहा था, तब नौकर ने परचा लाकर दिया।

उस परचे पर "अत्तफ़" का दस्तखत देखकर मूर्छित होकर वह सामने गिर गया। उसके हाथ का शराब का ग्लास टुकड़े

टुकड़े हो गया। एक टुकड़ा जाफ़र के माथे में चुभा और ज़ख्म हो गया।

जाफ़र के पास बैठे लोग गरजे। "कौन है वह दुष्ट! किसने यह परचा भेजा है!" वे चिल्लाये। उस आदमी को बहुत देर तक खोजने की ज़रूरत भी न हुई।

बड़े लोगों ने उसे काज़ी के पास भेजकर, उसको पाँच सौ कोड़ों की सजा देकर, कैद में डलवा दिया। अत्तफ़ सजा भुगतने के लिए कैद में गया।

जाफ़र ने अत्तफ़ का भेजा हुआ परचा पढ़ा ही नहीं। उसे यह भी याद न रहा कि वह मूर्छित होकर क्यों गिर गया था।

अत्तफ़ के कुछ दिन जेल में रहने के बाद खलीफ़ा के एक लड़का हुआ। जेल खाली कर दिये जाने का हुक्म हुआ। अत्तफ़ रिहा तो कर दिया गया, पर वह न जान सका कि क्या किया जाय! डमास्कस यदि वापिस गया, तो राजप्रतिनिधि के हाथ जरूर मारा जायेगा। बागदाद में जीने का कोई रास्ता न था। यहाँ तो भिखारियों के भी संघ थे। औरों को वे गलियों में भीख भी नहीं माँगने देते। उसका भ्रम ही था कि वह जाफ़र को अपना भाई समझ बैठा था। अब सिवाय खुदा के उसका कोई न था।

अत्तफ़ दिन भर उस मस्जिद में रहा। खुदा को याद करता रहा। क्योंकि मस्जिद में रात को सोना कानून के खिलाफ़ था किसी उजड़े घर की खोज में वह निकल पड़ा। उसे एक ऐसा घर मिल भी गया। वह उस घर में घुसा। अन्धेरे में कुछ पैर पर लगा। जब उसने टटोलकर देखा, तो वह किसी मनुष्य का शरीर था, किसी ने उसकी हत्या कर दी

थी। जिस छुरे से उसकी हत्या की गई थी, वह भी वहीं था।

अत्तफ़ गली में गया। गश्त करते सिपाहियों को बुलाकर, उसने शव के बारे में कहा। उसके कपड़ों पर खून के धब्बे देखकर सिपाहियों ने कहा—"तुम ही हत्यारे हो। कहो, हो कि नहीं?" जब उसने कोई जवाब न दिया, तो उनका ख्याल पक्का हो गया कि वह ही हत्यारा था। उसे ले जाकर उन्होंने कैद में डाल दिया।

अगले दिन काज़ी ने जाफ़र के पास आकर कहा—"कल कोई भिखारी एक उजड़े घर में एक व्यक्ति की हत्या करके छुरी के साथ पकड़ा गया। जब पूछा गया कि हत्या क्यों की, वह जवाब नहीं देता है, उसे क्या सज़ा दी जाये? आपका क्या हुक्म है?"

"सिर काट दो।" जाफ़र ने कहा।

उस दिन जाफ़र पैदल कहीं जा रहा था कि वध्यस्थान पर उसे भीड़ दिखाई दी। वहाँ आकर उसने काज़ी से पूछा—"किसी को सज़ा दी जाती मालूम हो रही है।"

"हाँ, हत्यारे का सिर काटा जा रहा है। कहीं डमास्कस से बगदाद वह आया था।" काज़ी ने कहा।

डमास्कस का नाम सुनते ही जाफ़र ने अत्तफ़ की ओर देखा। पर वह उसे पहिचान न सका। अत्तफ़ तब तक उतना बदल चुका था।

"क्यों भाई, तुम डमास्कस के हो? या आसपास के किसी गाँव के?" जाफ़र ने पूछा।

"खास शहर का ही हूँ!" अत्तफ़ ने कहा।

"देखो, उस शहर में अत्तफ़ नाम का एक उदार व्यक्ति है। क्या तुम उसे जानते हो?" जाफ़र ने पूछा।
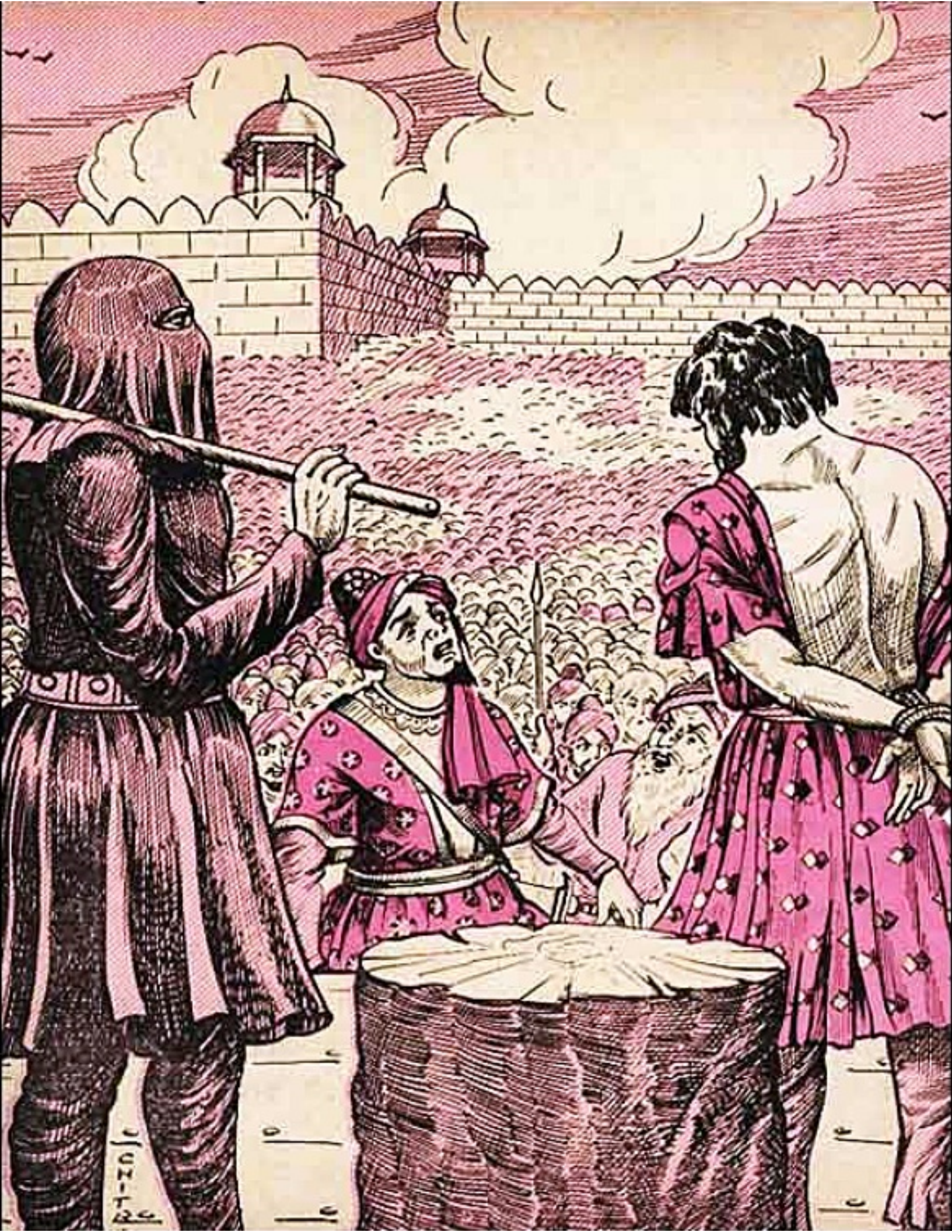
"आप और वे जब दोस्त थे, मुझे मालूम है, किस गली में, किस घर में आप ठहरे थे। उसकी एक सम्बन्धी से आपकी शादी होना भी मुझे याद है। बगदाद आते समय आपका उससे विदा लेना भी मुझे याद है।" अत्तफ़ ने कहा।

"उसके बाद वह कहाँ चला गया।" जाफ़र ने पूछा। अत्तफ़ ने अपनी कहानी सुनाकर पूछा—"हुज़ूर, जाफ़र साहब मैं ही वही अत्तफ़ हूँ।"

जाफ़र ने जोर से चिल्लाकर उसका आलिंगन कर लिया।

इतने में एक बूढ़ा "ठहरो ठहरो" चिल्लाता वहाँ आया।

"कौन हो तुम?" जाफ़र ने बूढ़े से पूछा।

"असली हत्यारा।" बूढ़े ने कहा।

"क्यों हत्या की तुमने?" जाफ़र ने पूछा।

"उसकी? वह बदमाश है, उसकी हत्या एक बार नहीं, अगर हज़ार बार भी की जाय तो कोई पाप नहीं है। यह सुन कि इस अपराध के लिए किसी और का सिर काटा जा रहा है, मैं भागा भागा आ रहा हूँ। यदि एक निर्दोष व्यक्ति को मेरे बदले मार दिया गया, तो ख़ुदा मुझे माफ़ न करेंगे।" बूढ़े ने कहा।

"तुम्हारी बातों पर विश्वास नहीं किया जा सकता। तुम पर अपराध सिद्ध नहीं हुआ है। किसी का भी सिर नहीं काटा जा रहा है। तुम जाओ।" जाफ़र ने बूढ़े से कहा।

फिर जाफ़र अत्तफ़ का हाथ पकड़कर, उसे स्नानशाला में ले गया। उसे वहाँ अच्छी तरह स्नान करवाकर वह उसे खलीफ़ा के पास ले गया।

"तुम्हारे बारे में जाफ़र ने बहुत कहा है। तुम्हारी क्या हालत थी और क्या हालत हो गई है!" खलीफ़ा ने कहा।

अत्तफ़ रोना न रोक सका। पर जब उसने अपनी कहानी सुनाई तो खलीफ़ा उससे दुगना रोया।

उसने फिर जाफ़र से पूछा—"जानते हो, इस युवक का ऋण तुम पर कितना है!"

"मुझ में जो कुछ खून है, वह उसी का है। मैं उसका गुलाम हूँ। यही नहीं उसने मेरे लिए तीस लाख दीनारें खर्च कीं, उसने जो उपहार दिये हैं, न मालूम उनकी कितनी कीमत है! मैं ही नहीं जानता हूँ।" जाफ़र ने कहा।

अत्तफ़ के कष्ट समाप्त हो गये। खलीफ़ा ने हुक्म दिया कि राजप्रतिनिधि को कैद कर लिया जाये। अत्तफ़ को उसकी प्रेयसी फिर मिल गई। वह बगदाद में बहुत दिन आराम से रही। फिर उसके रिश्तेदार चिट्ठियाँ लिखकर डमास्कस आने के लिए उस पर दबाव डालने लगे।

खलीफ़ा को अत्तफ़ का डमास्कस चला जाना बिल्कुल पसन्द न था। फिर भी उसने उसको डमास्कस का काज़ी नियुक्त करके बहुत-से उपहार देकर, खच्चर, ऊँठ और नौकर चाकरों को देकर विदा किया।

अत्तफ़ के पुनरागमन को डमास्कस के वासियों ने उत्सव की तरह मनाया। अत्तफ़ क्योंकि अब काज़ी था उसने राजप्रतिनिधि को जेल से रिहा कर दिया और उसको नगर से बहिष्कृत कर दिया।

उस दिन रात को जो पुस्तक खलीफ़ा को मिली थी वह उसके बारे में बिल्कुल भूल गया। जाफ़र ने भी भूलकर उसकी याद न दिलाई।

# प्राण मित्र

फ्रान्स देश में एक ही दिन दो ज़मीन्दारों के दो लड़के हुए। वे एक रोज ही न पैदा हुए, जुड़वे बच्चों की तरह दोनों का नाक नक्शा भी एक था। उनमें से एक का नाम अमिस और दूसरे का अमिल था। जल्दी ही दोनों के पिता आपस में मिले, और वे जान सके कि उनके पुत्रों में असाधारण समानता थी। तब से दोनों लड़के मित्र हो गये। जैसे जैसे समय बीतता जाता था, वैसे वैसे उनका स्नेह भी बढ़ता जाता था।

जब वे सयाने हुए तो दोनों मित्र राजा के यहाँ नौकरी करने निकले। राजा ने उनकी आवश्यक परीक्षा ली और उन दोनों को अलग अलग नौकरी दे दी।

कुछ दिनों बाद अमिस ने एक लड़की से प्रेम करके विवाह कर लिया। उसने अमिस से उतना प्रेम न किया, जितना कि उसकी ज़मीन-जायदाद से। उसे यह भी न भाता था कि उसका पति, अमिल को प्राणों से अधिक चाहे। परन्तु उसने यह ईर्ष्या पति को न दिखाई। मन ही मन में उसे वह रखे रही।

अमिल ने शादी न की। इसका कारण यह था कि वह राजा की लड़की से ही प्रेम करने लगा था। उसने प्रतिज्ञा कर ली कि सिवाय उसके वह किसी और से शादी न करेगा। अमिल की प्रतिज्ञा ऐसी न थी, जो आसानी से पूरी हो सकती थी।

न मालूम राजकुमारी का अमिल के प्रति क्या रुख था और महाराजा इस फ़िक्र में था कि कब वह अपनी लड़की की किसी राजकुमार से शादी करके, उसके राज्य को हड़पेगा।

सत्यदेव

एक दिन अमिस ने अपने ससुराल जाते हुए अपने मित्र से कहा—"मेरे वापिस आने तक अपने प्रेम को लगाम में रखो नहीं तो आपत्ति की सम्भावना है।"

"मैं जल्दी में कुछ न करूँगा।" अमिल ने अपने मित्र को वचन दिया। अमिस अपनी पत्नी को देखने चला गया।

अमिल तो न जानता था, पर राजकुमारी भी उससे प्रेम करती आ रही थी। अमिस जब पत्नी के पास था, तब मौका निकाल कर वह अमिल से एकान्त में मिली। उससे अपनी इच्छा के बारे में भी बताया। अमिल के आनन्द की सीमा न रही। उसके बाद वे छुपे-छुपे कई बार मिले।

यह बात किसी राजकर्मचारी ने देख ली और उसने राजा से शिकायत की। उसकी, पहिले ही अमिस और अमिल से उसकी न बनती थी—क्योंकि राजा उन दोनों को चाहता था।

यह शिकायत सुनते ही राजा ने नाराज़ होकर अमिल को बुलाया—"इस कर्मचारी का कहना है कि तुम राजकुमारी से छुपे-छुपे मिल रहे हो—तुम क्या कहते हो?"

अमिस को जिस बात भय था, ठीक ठीक वही हुआ। अमिल को पाप का भय था। यदि वह कहता है कि वह राजकुमारी से न मिला था, तो वह झूट बोल रहा होगा और झूट बोलने से उसे पाप लगता। इसलिए उसने सिवाय इसके "मैं कुछ नहीं जानता" कुछ न कहा।

"तो क्या मैंने झूट बोला है? हम दोनों में कौन झूटा है, भगवान ही निश्चित करेंगे, यदि हिम्मत है, तो मुझसे द्वन्द्व-युद्ध करो।" कर्मचारी ने कहा।

राजा और दरबारियों के समक्ष उन दोनों के द्वन्द्व-युद्ध के लिए एक दिन निश्चित किया गया। अमिल राजा से विदा लेकर अमिस से मिलने गया। सौभाग्यवश, अभी वह नगर से बाहर गया था कि अमिस आ रहा था।

अमिल ने जो कुछ गुज़रा था, अपने मित्र से कहा—"अमिस मुझे अब क्या करना है? जिसने मेरी शिकायत की है, मैं उससे कैसे युद्ध करूँ, क्या भगवान मुझे जीतने देंगे?"

अमिस ने कुछ देर सोचने के बाद कहा—"तुम गाँव चले जाओ और जब

तक मैं न बुला भेजूँ, तब तक न आओ। जिसने तुम्हारी शिकायत की है, मैं उससे द्वन्द्व-युद्ध करूँगा। हम दोनों में कोई भेद नहीं है। यदि मैंने कवच पहिन लिया, तो कोई न कह सकेगा कि मैं तुम नहीं हूँ। मैं यह भी शपथ लेकर कह सकता हूँ कि मैं राजकुमारी से न मिला था, कभी उससे बातचीत न की थी। क्योंकि इसमें कुछ झूट तो है ही नहीं।"

अमिल अपने दोस्त के घर चला गया। अमिस ने उसके बदले द्वन्द्व-युद्ध किया। बहुत समय तक लड़ने के बाद उसने अपने विरोधी को मार दिया। इससे राजा और दरबारियों के लिए यह साबित हो गया कि अमिल निर्दोष था।

राजा को कर्मचारी की बात पर विश्वास करने का बड़ा अफ़सोस रहा। "जो अफ़वाह उड़नी थी, वह तो उड़ ही चुकी है, क्यों न महा योद्धा अमिल से अपनी लड़की से शादी कर दूँ।" उसने कहा।

अमिस ने अपने मित्र को खबर भेजी। उससे नगर के बाहर मिलकर, सारी बात कह भी दी। अमिस के कारण अमिल निन्दा से तो बचा ही, उसकी एक ऐसी इच्छा भी पूरी हो गई, जो उसने सपने में भी न सोचा था कि पूरी होगी।

अमिल की जब राजकुमारी से शादी हो गई तो उसने अपनी पत्नी से अमिस के किये हुए उपकार के बारे में कहा। सब सुनने के बाद उसने कहा—"वाह कैसा मित्र है। उसका ऋण चुकाने का मौका हमें कब मिलेगा!" उसने कहा।

कुछ दिनों बाद दोनों मित्रों ने राजा की नौकरी छोड़ दी। जो कुछ उन्होंने कमाया था, उसे लेकर अपनी जगह चले गये।

अमिल राजकुमारी के साथ आराम से जिन्दगी बसर कर रहा था। उनके दो लड़के भी हुए। उनके वे अच्छे दिन थे।

परन्तु अमिस का भाग्य अच्छा न था। उसकी पत्नी को उसकी परवाह न थी। परन्तु उसने यह बात किसी को न जानने दी। इतने में अमिस को कोढ़ हो गया। उस बीमारी की चिकित्सा न थी।

जब अमिस इस दुस्थिति में था, तो उसकी पत्नी का उसको और अच्छी तरह देखना तो अलग उसने उसे दूर एक झोंपड़ी में रख दिया। उसकी देख भाल नौकर चाकर भी ठीक तरह न करते। भोजन भी उसे ठीक तरह न देती।

"मुझे क्यों यों तंग करती हो? मैं बहुत समय न जीऊँगा। जब तक मैं जीवित हूँ, कम से कम मुझे अच्छी तरह खाने के लिए तो दो।" अमिस ने अपनी पत्नी के पास कहला भेजा।

"तुम जितनी जल्दी मर जाओगे, उतना ही अच्छा।" उसने खबर भिजवाई।

ऐसी बात न थी कि अमिस के विश्वासपात्र नौकर न थे। परन्तु मालकिन

के डर से वे अपने मालिक की किसी भी तरह सहायता न कर सके। अमिस ने दो विश्वासपात्र नौकरों को बुलाकर कहा—"अरे, मुझे खाट पर रखकर ढ़ोकर निकल पड़ो। यदि मेरी पत्नी को मुझ पर दया नहीं आती है, तो कम से कम दुनियाँ तो करेगी।"

नौकर अपने मालिक को एक खाट पर लिटाकर, उसे उठाकर बड़ी सड़क पर निकल पड़े। रास्ते में भीख माँगता माँगता अमिस उस ग्राम में पहुँचा, जहाँ उसका मित्र रहा करता था।

अपने प्राण मित्र को उस बुरी हालत में देखकर, अमिल ने उसे गले लगा लिया। वह उसे अपने घर ले गया। अपने बिस्तर पर उसे लिटा दिया। दिन रात वह स्वयं उसकी सेवा करने लगा।

एक दिन रात को अमिस को एक विचित्र सपना आया। सपने में एक देवी ने प्रत्यक्ष होकर पूछा—"क्या तुम अपना रोग ठीक करना चाहते हो?"

"हाँ, अवश्य।" अमिस ने कहा।

"यदि तुमने अपने मित्र के लड़कों को मारकर, उनके रक्त से स्नान किया, तो अवश्य तुम्हारी बीमारी ठीक हो जायेगी।" देवी ने कहा।

"मैं इसके लिए कभी न मानूँगा।" अमिस जोर से चिल्लाया। बड़बड़ाता वह उठ बैठा।

परन्तु अमिल तो जगा ही हुआ था, उसने मित्र का बड़बड़ाना सुना—"तुम किसके लिए मना कर रहे हो अमिस?" उसने पूछा।

"यूँ ही एक सपना था।" अमिस ने कहा।

"वह सपना क्या था, जरा मुझे भी बताओ।" अमिल ने कहा।

उसके बहुत कहने पर अमिस ने वे बातें कहीं, जो सपने में देवी ने कहीं थीं, फिर कहा—"यह सच नहीं है, सपना ही तो है।"

अमिल ने इधर उधर की बातें सुनकर, अमिस को सुला दिया। वह सवेरे तक सोचता रहा। फिर वह उस जगह गया, जहाँ उसकी पत्नी व लड़के सो रहे थे। पत्नी को उठाकर उसने कहा—"तुम गिरजे में जाकर, हमारे मित्र अमिस के लिए प्रार्थना करके आओ।"

उसके गिरज़ा घर की ओर जाते ही, अमिल ने तलवार निकाली, अपने सोते दोनों लड़कों का सिर काट दिया। उनका खून लेकर, उसने अमिस के शरीर पर पोत दिया। तुरत अमिस का कोढ़ इस तरह चला गया, जैसे किसी ने जादू किया हो। सपने में अमिस को जो बात देवी ने कही थी, वह बिल्कुल ठीक निकली।

अमिल ने अपने मित्र से कहा—"भगवान की कृपा से तुम्हारी बीमारी ठीक हो गई है, चलो, हम गिरज़ा घर चलें। भगवान की प्रार्थना करें।" उसने अमिस को अपनी सब से अच्छी

पोषाक दी। फिर वह उसके साथ निकल पड़ा।

जब वे गिरजा घर के पास पहुँचे, तो अमिल की पत्नी बाहर आती हुई दिखाई दी। जब दोनों मित्र भगवान को नमस्कार करके आये तो वह भी उनके साथ चली। घर पहुँचने पर उसने अपने पति से पूछा—"हमारे मित्र की बीमारी कैसे ठीक हो गई?"

जो कुछ गुज़रा था, अमिल ने कह सुनाया। उसकी पत्नी बहुत दुःखी हो रही थी। पर अपने दुःख को रोकते हुए कहा—"मुझ से पहिले जो कह दिया होता, मैं भी पास ही होती! मैं सोच ही रही थी कि कब हमें उनके उपकार का ऋण चुकाने का मौका मिलेगा। वह अब इस प्रकार मिला।"

ऊपर से उसने कहने को तो कह दिया, पर लड़कों की याद करके उसका दुःख उफनता जाता था। वह अपने पति का मुँह भी न देख पा रही थी। इसलिए वह उस कमरे की ओर भागी, जहाँ उसके लड़के सोये हुए थे। परन्तु उस भयंकर दृश्य की कल्पना मात्र से वह भयभीत थी।

उस कमरे में पैर रखते ही, उसको डर होना तो अलग, आश्चर्य हुआ। उसके दोनों लड़के बिस्तरे पर बैठकर कोई खेल खेल रहे थे। उनके गले पर लाल लकीर अवश्य थी।

उस दिन उस घर में एक ही समय में दो दिव्य चमत्कार हुए। एक ऐसे कोढ़ का निवारण, जिसकी कोई चिकित्सा न थी और दूसरे मरे हुए दोनों लड़कों का पुनर्जीवित होना।

## बुद्धिमती गृहणी ★ [रामतीर्थ कथा]

याज्ञवल्क्य की दो पत्नियां थीं कात्यायिनी और मैत्रेयी। वह बड़ा धनी था। उसने यह संसार और इसके सुख छोड़ वन में जाकर तपस्या करने का निश्चय किया। तब उसने अपनी सारी सम्पत्ति दो भागों में बाँट दी, और अपनी दोनों पत्नियों को उसे लेने के लिए कहा।

मैत्रेयी क्योंकि बुद्धिमती थी इसलिए उसने यों सोचा। "मेरे पति सब श्री-सम्पदा छोड़कर क्यों वन में जा रहे हैं? इसीलिए तो न कि उसमें अधिक आनन्द है। क्या कोई आनन्ददायक जीवन को छोड़कर कष्टमय जीवन को स्वयं अपनाता है?"

यह सोच मैत्रेयी ने अपने पति से कहा—"जिस ज्ञान के कारण आप ये वैभव ऐश्वर्य छोड़कर जा रहे हैं। उनके बारे में जरा मुझे भी बताइये। मुझे धन नहीं चाहिए।" कात्यायिनी को याज्ञवल्क्य ही सारी सम्पत्ति मिली। परन्तु मैत्रेयी ने अपने पति से तत्वज्ञान पाया।

# घर का भूत

एक गाँव में लल्लमल नाम का चूड़ियों का व्यापारी था। गाँव के सिरे पर बड़े अहाते में उसका एक झोंपड़ा था। उसमें वह अपनी पत्नी और बच्चों के साथ रहा करता। ज़मीन, घर और चूड़ियों के अलावा लल्लमल के पास एक बछड़ा और मुर्गियाँ भी थीं।

लल्लमल रोज़ सवेरे उठता। गौ का दूध दुहता, उसे घास देता, बासा भात खाता, दुपहर के लिए खाना बाँध लेता और व्यापार के लिए निकल पड़ता, शाम तक यह गाँव, वह गाँव घूमकर अन्धेरा होने पर घर लौटता।

एक दिन जब लल्लमल एक बढ़ के पेड़ के पास पहुँचा, तो दुपहर हो गई। पास में एक कुँआ भी था। लल्लमल ने अपना माल नीचे रख दिया, लोटे में पानी लेकर, भोजन की पोटली खोलकर, जितना खा सका, उतना खाकर, बाकी यह सोच कि कुत्ते खालेंगे वहीं छोड़ अपना माल उठाकर आगे चल दिया।

लल्लमल का जाना था कि उस तरफ़ एक ब्रह्मराक्षसी आई। जहाँ वह पहिले रहती आई थी। वह पेड़ गिर गया था, इसलिए वह इस बढ़ के पेड़ के पास आई थी। उसे लल्लमल का छोड़ा हुआ भोजन दिखाई दिया। क्योंकि वह भूखी थी, इसलिए उसने वह भोजन खा लिया।

तब तक ब्रह्मराक्षसी ने सिवाय माँस और खून के कुछ न चखा था। अब उसे पता लगा कि मनुष्यों का भोजन कितना स्वादिष्ट होता था।

इस प्रकार का भोजन करने के लिए उसने मनुष्यों की तरह जीना चाहा।

चूड़ियोंवाले लल्लूमल की प्रतीक्षा करती वह वहीं रह गई।

जब उस दिन वह चूड़ियाँ बेचकर, उसी रास्ते वापिस आ रहा था, बड़ के पेड़ के पास माल उतार कर, कुँये के पास से पानी लाकर पी रहा था कि उसे किसी स्त्री का रोना सुनाई दिया।

लल्लूमल ने जो सिर फेर कर देखा, तो एक स्त्री पेड़ के पास रोती दिखाई दी।

"तुम कौन हो? यहाँ क्यों अकेली रो रही हो?" लल्लूमल ने पूछा।

"मैं बहुत दूर से आयी हूँ। मेरा पति कहीं चला गया है। उसे ढूँढ़ती निकली हूँ। भूखी प्यासी मर रही हूँ।" उस स्त्री ने कहा।

"अरे, तो हमारे घर आकर, हमारे काम में मदद करना, वेतन तो नहीं दे सकूँगा। पर पेट-भर भोजन दूँगा। जब तुम्हारे पति के बारे में पता लगे, चले जाना।" लल्लूमल ने कहा।

ब्रह्मराक्षसी भी यही चाहती थी। "जो कुछ मैं कर सकूँ, तुम मुझसे करवा लेना। यदि तुमने कोई ऐसा काम बताया, जो मैं न कर सकूँ, तो तुम्हारे घर एक क्षण न

रहूँगी, यह मैं पहिले ही बता देती हूँ। बाद में मुझे बुरा भला न कहना।"

लल्लूमल इसके लिए मान गया। स्त्री के रूप में वह उस ब्रह्मराक्षसी को साथ ले गया। उसकी पत्नी ने पति से उस स्त्री के बारे में सारी जानकारी ले ली। फिर उससे पूछा—"तुम्हारा नाम क्या है?"

"मेरा नाम प्रेता है!" ब्रह्मराक्षसी ने कहा।

तो अगले दिन से प्रेता लल्लूमल के घर काम करने लगी। सवेरे उठती, आँगन

बुहारती, पानी छिड़कती। लल्लूमल के गौ के दुहने के बाद, उसे और बछड़े को दुपहर तक चराने ले जाती। और दिन भर लल्लूमल की पत्नी की सहायता करती। प्रेता के आने पर, लल्लूमल और उसकी पत्नी को कुछ आराम मिलने लगा। सब उसको अच्छी तरह देखते।

थोड़ा समय बीत गया। संक्रान्ति के दिन आये। दिन छोटे हो गये। व्यापार भी खूब चल रहा था—एक दिन लल्लूमल ने अन्धेरा होने के बहुत देर बाद घर का दरवाज़ा खटखटाया। तब तक घरवाले खाना खा चुके थे। ठँड के कारण कपड़े ओढ़े पड़े थे। लल्लूमल की पत्नी पलंग पर थी। प्रेता फर्श पर चटाई पर लेटी हुई थी।

लल्लूमल की पत्नी उठना न चाहती थी। "वे शायद आ गये हैं। ज़रा दरवाज़ा तो खोलो, प्रेता।"

प्रेता कुछ गुनगुनायी, फिर लेटे-लेटे हाथ बढ़ाकर उसने दरवाज़ा खोल दिया। यह लल्लूमल की पत्नी ने देखा। उसकी तो जान जाते-जाते बची। उसने अपना भय व्यक्त न किया।

अगले दिन सवेरे उसने अपने पति से उस विचित्र बात के बारे में कहा—"यह स्त्री नहीं है, इसका नाम ही विचित्र है। क्या कोई प्रेता नाम रखता है?"

लल्लमल को पहिले तो पत्नी की बात का विश्वास न हुआ। उसने सोचा था कि यह कोई भ्रम होगा, नहीं तो स्वप्न। पर उसे भी सन्देह हो रहा था। जब वह अन्दर आया, तो प्रेता चटाई पर लेटी हुई थी। दरवाज़ा खोलकर, फिर जाकर सोने का समय तक न था।

प्रेता स्त्री थी कि नहीं, यह दूसरी बात है, पत्नी डर रही है, यही काफ़ी है, उसे भेज देना ठीक होगा। लल्लमल ने सोचा। परन्तु बिना किसी कारण के भेज देना ठीक न था। प्रेता ने पहिले ही बताया था, यदि उसे कोई ऐसा काम सौंपा गया, जो वह न जानती थी, तो वह चली जायेगी। उसे भेज देने के लिए लल्लमल ने एक चाल सोची।

उसने प्रेता से कहा—"देखो प्रेता, घर का इतना बड़ा आहाता है, इसमें बहुत से पेड़ लगाये जा सकते हैं। पर

पहिले चार दिवारी बनानी होगी, ज़रा यह काम तो करो।

प्रेता ने नहीं कहा कि वह यह काम न कर सकती थी। उसने खुद नींव के लिए गढ़ा खोदा। ईंट बनाई और अकेली ऊँची चार दिवारी भी बना दी। फिर कहीं से बड़े-बड़े पेड़ उखाड़ कर लाई और इधर-उधर गाड़ दिये।

प्रेता मामूली स्त्री न थी, यह लल्लूमल ही न जान पाया, बल्कि गाँव के सब लोग जान गये। लल्लूमल को न सूझा कि इस भूत से कैसे पीछा छुड़ाया जाय। यह बात सच थी कि प्रेता किसी का अपकार नहीं कर रही थी। परन्तु वैसी स्त्री का घर में रहना खतरनाक था। गाँववाले कह रहे थे—"तुम उस भूत को घर से निकालते हो या घर छोड़कर जाते हो।" लल्लूमल के घर के आसपास हमेशा लोगों का जमघट लगा रहता। जो उनमें साहसी थे, वे प्रेता को देखने घर के अन्दर भी चले जाते।

एक दिन जब लल्लूमल का परिवार आँगन में था, तो एक बिल्ली, चूहे का पीछा करती आयी। चूहा भागता-भागता एक छेद में जा घुसा।

यह सब लल्लूमल का लड़का देख रहा था, उसने कहा—"प्रेता प्रेता, उस चूहे को तो लाओ।

"क्यों! तुम सोच रहे हो कि मैं उसे निकालना नहीं जानती!" वह सब के देखते-देखते चूहे जितनी हो गई और छेद में जा घुसी।

यही मौका देख लल्लूमल ने आकर उस छेद में ढेर से मिट्टी डाल दी। छेद भर डाला। उसके बाद किसी ने प्रेता को नहीं देखा।

# नई नौकरी

सेठ की दी हुई चवन्नी लेकर भीम निकल पड़ा। वह जंगल के रास्ते जा रहा था कि अन्धेरा हो गया। अन्धेरे में वह कुछ दूर गया ही था कि उसे कुछ लोग सिर पर गठरियाँ रखकर सामने से आते हुए दिखाई दिये।

वे जेवरों के व्यापारी थे। जंगल के पार के गाँव के थे। ये व्यापारी डाकुओं के डर से जो कुछ सोना चान्दी उनके पास था, उसको सिर पर लादकर भागे आ रहे थे। जौहरियों ने जंगल में ही रात काटने की सोची।

उन्होंने भीम को देखकर पूछा—"अरे भाई, तुम कहाँ जा रहे हो? जंगल के पार के गाँव में डाकू आये हैं। हम वहाँ से भागे आ रहे हैं।"

"तुम कौन हो?" भीम ने पूछा।

"हम जौहरी हैं। हम पेड़ों पर चढ़कर सो जायेंगे। यदि तुम पहारा देते रहे, तो तुम्हें कुछ देंगे।" उन्होंने कहा।

"तुम पेड़ों पर चढ़ जाओ, पर मैं नीचे ही रहूँगा।" भीम ने कहा।

"यदि कोई जानवर आया तो?" जौहरियों ने पूछा।

"मार दूँगा, कोई डर नहीं। तुम कहीं नींद में न लुढ़क जाना, जरा सम्भल कर रहना।" भीम ने कहा।

"वह लड़का बहादुर है, हिम्मतवाला है।" भीम की प्रशंसा करते जौहरी पेड़ों पर जा बैठे। उन्होंने पोटलियों को टहनियों पर लटका दिया। अपने को भी टहनियों पर बाँधा ताकि नींद में नीचे न गिर जायें, वे सो रहे। और भीम पेड़ के तने के सहारे सो गया।

रात को डाकू उस तरफ पैदल चलते हुए आये। आगे का डाकू भीम के पैरों से टकराकर गिरते गिरते बचा। "अरे कुछ बचकर चलो, यहाँ कोई तना पड़ा है।" उसने कहा।

चोर का पैर पड़ते ही भीम उठा। वह गुस्से में गरजा—"अरे मुझे तना बताते हो! क्या तुम्हारी आँखें नहीं हैं!" कहता वह खड़ा हुआ।

"तो तुम आदमी हो, जो कुछ तुम्हारे पास है, वह सब दे दो। नहीं तो तुम्हें मार देंगे।" डाकू ने कहा।

"दे दूँगा, पर तुम कौन हो!" भीम ने पूछा।

"डाकू। जो कुछ तुम्हारे पास है, वह दे दो।"

"यानी डाकू तुम ही हो—तो लो ये चवन्नी। मेरे पास इससे अधिक कुछ नहीं है।" उसने अपनी चवन्नी दे दी। वे अपने रास्ते चले गये। उनके कुछ दूर जाने के बाद भीम ने पुकारा—"अरे डाकुओ! यह चवन्नी मुझे एक सेठ ने दी थी। यदि वह खोटी चवन्नी हो, तो बाद में मुझे बुरा भला कहने से कुछ न होगा। इस पेड़ पर जौहरी बैठे हैं। उनको उठाकर पूछो कि वह चवन्नी अच्छी है या खोटी।"

"जौहरी का नाम कानों में पड़ते ही डाकुओं को न जाने जोश कहाँ से आ गया। उन्होंने सारा पेड़ छान डाला। जौहरियों की खूब मरम्मत की। उनकी गठरियाँ ले लीं। उन्होंने भीम से कहा—"तुम भी हम में शामिल हो जाओ। तुम्हें डाका डालना सिखा देंगे।"

"अच्छा, तो मैं भी शामिल हो जाऊँगा—चाहे मैं कहीं भी रहूँ, सब मेरे लिए एक ही है।" भीम ने कहा।

# अयोध्या काण्ड

पिता को उस स्थिति में देखकर राम भयभीत हो उठे। उन्होंने घबराकर कैकेयी से पूछा—"क्या मुझ से कोई गलती हो गई है? पिता जी का इस प्रकार चिन्तित होने का क्या कारण है! मैंने उन्हें कभी इस हालत में नहीं देखा है!"

कैकेयी ने बिना हिचकिचाये कहा—"राजा को गुस्सा नहीं है। उनकी एक इच्छा है, वह तुम्हें बताने के लिए संकोच कर रहे हैं। कभी उन्होंने मुझे एक वर देने का वायदा किया था। शायद अब पछता रहे हैं क्यों तब वायदा किया था। पर वचन का निभाना धर्म है। पिता के वचन निभाने का भार तुम पर है। बात अच्छी हो या बुरी यदि तुमने उसे पूरा करने का वचन दिया तो मैं बताऊँगी। वे अपने मुख से यह न कह सकेंगे। इसलिए मुझे ही कहना होगा।

"यह क्या है माँ! क्या आप मुझपर यों सन्देह कर सकती हैं! अगर पिता जी चाहें, तो क्या मैं आग में न कूदूँगा! उनकी क्या इच्छा है बताओ, ज़रूर करूँगा।"

कैकेयी ने राम से देव और असुरों के युद्धों के बारे में कहा। दशरथ ने उस समय वर दिया था। उस वर के अनुसार कैकेयी ने कहा, राम को चौदह साल वनवास करना होगा।

"ये पट्टाभिषेक की तैयारियाँ व्यर्थ नहीं जायेंगी। भरत का पट्टाभिषेक होगा, और भूमि की चारों दिशाओं में उसका राज्य होगा। यदि तुम वल्कल वस्त्र पहिनकर, बाल बढ़ाकर, वन में रहे तो तुम्हारे पिता पर यह आरोप नहीं लगाया जायेगा कि वे वचन देकर मुकर गये थे।"

इतनी कठोर बात और जिस कठोर ढँग से वह कही गई थी, और कोई सुनता तो इतना उन्मत्त-सा हो जाता, क्रुद्ध होता कि कैकेयी का मुँह भी शायद न देखता। परन्तु राम ने शान्त भाव से कहा—"माँ, तो ऐसा ही होगा। मैं वल्कल वस्त्र पहिनकर वन में जाऊँगा। भरत के लिए तुरत खबर भिजवाइये। जब पिता की यह प्रतिज्ञा है और तुम्हारी इच्छा है, तो क्या मैं भरत को राज्य नहीं दूँगा! मुझे तो बस यही कष्ट है कि पिता जी ने मुझ से यह न कहा कि वे भरत का पट्टाभिषेक करवाना चाहते थे।"

यह सुन कैकेयी ने सन्तुष्ट होकर कहा—"और कुछ नहीं, शायद वे इसी द्विविधा में रहे कि तुम उनकी इच्छा पूरी करोगे कि नहीं. इसलिए ही तुम्हें इस विषय में कुछ न कहा। भरत को बुलवाऊँगी। परन्तु तुम बिना देरी किये वन चले जाओ। जब तक चले न जाओगे, तब तक तुम्हारे पिता स्नान या भोजन आदि नहीं करेंगे।"

कैकेयी की ये बातें सुनकर दशरथ मूर्छित हो गये। राम ने उन्हें उठाकर कैकेयी से कहा—"माँ, मुझमें राज्याकांक्षा या धनाकांक्षा नहीं है। यदि मुझे कुछ और करना हो तो बताओ। जो वर तुमने राजा से माँगे हैं, वे बहुत छोटे हैं।"

दशरथ यकायक रो उठे और फिर मूर्छित हो गिर गये। राम ने पिता और

कैकेयी की प्रदक्षिणा की, उनको नमस्कार किया। फिर वे अन्तःपुर से बाहर चले गये। अपने मित्रों की ओर देखा। पट्टाभिषेक की वेदिका की प्रदक्षिणा करके निकल पड़े। लक्ष्मण अत्यन्त दुख और क्रोध के साथ भाई के पीछे पीछे चले।

राम रथ पर न सवार हुए। छत्र और चामरों का उपयोग उन्होंने निषिद्ध कर दिया। उन्होंने अपनी ऐसी मनःस्थिति कर ली, जो उन योगियों की होती है, जो सर्वस्व त्याग चुके होते हैं। दुःख को दबा कर वे अपनी माता कौशल्या से यह कहने निकले। दशरथ की अन्तःपुर की स्त्रियाँ ज़ोर ज़ोर से रोने लगीं।

राम लक्ष्मण जब कौशल्या के महल में गये तो, यह कोई न जानता था कि क्या होने जा रहा था। राम जब पहिले प्राकार के द्वार से अन्दर जा रहे थे, तो वहाँ एक बूढ़े और कई लोगों ने उठकर उनका विजय ध्वनियों से स्वागत किया। दूसरे प्राकार के वृद्ध ब्राह्मण को नमस्कार करके वे तीसरे प्राकार में गये। वहाँ सब स्त्रियाँ ही थीं। उनमें से कुछ कौशल्या से राम लक्ष्मण के आगमन के बारे में कहने गईं।

बाकी ने जय जय निनाद किया—"महा राजा की जय हो।"

जब राम पहुँचे तो कौशल्या हवन कर रही थीं। उन्होंने राम का आलिंगन किया।

राम को न सूझ रहा था कि माता को कैसे वह दुखद वार्ता सुनायें। "माँ, शायद तुम नहीं जानती हो! सब कुछ उलट पलट गया है। मैं चौदह वर्ष मांस आदि छोड़कर, कन्द, फल, वगैरह खाता, दण्डकारण्य में काटने जा रहा हूँ। मैं सिंहासन पर नहीं बैठने जा रहा हूँ। मैं दर्भासन पर बैठने जा रहा हूँ। पिता

क्या कहकर नहीं सताया। क्योंकि मेरे पति को मेरी परवाह नहीं है, मुझे स्वतन्त्रता नहीं है। अब मेरा जीवन कैकेयी की नौकरानियों से भी अधिक हीन हो जायेगा। पिछले पन्द्रह साल मैंने इसी आशा में काट दिये कि तुम कब राजा होते हो। अब वह आशा भी मिट्टी में मिल गई है। अच्छा है मैं मर जाऊँ। पर मौत बुलाने पर नहीं आती। बेटा, मैं भी तुम्हारे साथ आऊँगी।"

कौशल्या की बातें सुनते सुनते लक्ष्मण को एक बात सूझी—"माँ, उस कैकेयी की बात सुनकर, भाई के जंगल जाने में मुझे कोई नई बात नहीं दिखाई दी। राजा वृद्ध हैं। उनका मन दुर्बल है। स्त्री के मोह में यदि वे अन्यायपूर्ण कार्य करते हैं, तो कहाँ लिखा है कि हम भी अन्यायपूर्ण कार्य करें?" फिर उन्होंने राम से कहा—"भाई, इससे पहिले कि लोगों को पता चले कि राजा ने तुम्हें वनवास की आज्ञा दी है हम अपने बल और शौर्य से राज्य अपने वश में कर लेंगे। मैं बाण से सब विरोधियों को मार दूँगा। हमारे पिता ही हमारा विरोध कर रहे हैं। उनको मार

जी भरत का पट्टाभिषेक करने जा रहे हैं।"

यह सुन कौशल्या भूमि पर गिर पड़ी और छटपटाने लगीं। राम ने उन्हें उठाया। कौशल्या ने राम से कहा—"शायद मेरे जीवन में सुख नहीं है। तुम्हें जन्म देकर इन कष्टों के सहने की अपेक्षा यदि मैं बांझ ही रहती, तो एक ही चिन्ता रहती कि बच्चे नहीं हैं। मैं कभी सुखी न हुई। सोचा था कि तुम राजा बनोगे, तो कुछ सुख मिलेगा। होने को तो मैं राजा की पत्नी हूँ, पर सौतों ने मुझे

देना और उनके हाथ पैर बाँध देने में कोई पाप नहीं है। हम सब में तुम बड़े हो। यह राज्य तुम्हारा है! तुमने क्या गलती की है कि तुम्हें जंगलों में भेजा जा रहा है? यह रहा मेरा धनुष बाण, मैं युद्ध के लिए सन्नद्ध हूँ।"

कौशल्या ने राम से कहा—"बेटा, जैसा लक्ष्मण कह रहा है वैसा करो। क्या आवश्यक है कि तुम अपने पिता की बात सुनो! क्या मैं तुम्हारी माँ नहीं हूँ! मैं नहीं चाहती कि तुम जंगल जाओ। यदि तुम गये तो मैं उपवास करके प्राण छोड़ दूँगी। इसका पाप तुम पर लगेगा।"

राम ने माँ से कहा—"मैं पिता जी की आज्ञा का धिक्करण नहीं कर सकता। पिता की आज्ञा पर कितनों ने ही कितने ही घोर पाप किये हैं। कंड नामक मुनिने गोवध किया। परशुराम ने माता की ही हत्या कर दी। साधारण सगर के पुत्र पिता की आज्ञा पर पाताल में गये और साठ हज़ार आदमी एक साथ मर गये। माँ, क्या मैं तुम्हारी परवाह किये बगैर वन में जा रहा हूँ!" फिर लक्ष्मण से कहा। "लक्ष्मण, क्या मैं तुम्हारा प्रेम और पौरुष नहीं जानता हूँ! सर्वोच्च स्थान धर्म का है। हमें उसे निभाना है। इसलिए तुम भी मेरी तरह सोचो।"

माँ को आश्वासित करने के लिए राम ने कितने ही धर्म बताये। उसने कहा कि उसके लिए यह ठीक न था कि वृद्ध पति को छोड़कर उसके साथ आये। उन्होंने लक्ष्मण से कहा—"यह दैव निर्णय है। नहीं तो वह कैकेयी, जो मुझे इतना चाहती थी; वन में जाने की आज्ञा देती! तुम्हें यह जानकर कितना दुःख हुआ कि पट्टाभिषेक रोक दिया गया है...

अनुमान करो उनको यह जानकर कितना दुःख हुआ होगा कि पट्टाभिषेक होने जा रहा है। मुझे याद नहीं कि मैंने कभी पिता जी का दिल दुखाया है। अब भी मैं उनके कष्ट नहीं देख सकता।

यह जानकर कि राम ने पिता की आज्ञा का पालन करने का दृढ़ निश्चय कर लिया था। कौशल्या ने उनके कल्याण के लिए ब्राह्मणों से हवन करवाया और उनको आशीर्वाद देकर भेज दिया।

राम सीता के अन्तःपुर में गये। सीता को देखते ही उनके आँसू न रुके। पति को, जिनके मुँह पर पट्टाभिषेक का उत्साह तो अलग, आँसू बहाता देख सीता भी घबराईं। उन्होंने उनसे पूछा कि क्या कारण था।

जो कुछ हुआ था, उसे सुनाकर राम ने उससे कहा—"जब तक मैं वन से वापिस न आऊँ, तब तक जैसा भरत कहे वैसा करो। उसके सामने कभी मेरी प्रशंसा न करना। सिवाय बन्धुत्व के भरत के पास तुम्हारा पोषण करने का और कोई कारण नहीं है। इसलिए तुम उसको सन्तुष्ट रखना। मेरे वृद्ध माता पिता की भी सेवा करना।"

यह सुन सीता ने प्रेम और क्रोध के सम्मिलित स्वर में पूछा—"ये क्या बातें हैं, आपने मुझे समझा क्या है कि आप मेरा अपमान कर रहे हैं। स्त्री के लिए पति ही तो सब कुछ है। यदि आपको वनवास दिया गया है तो क्या मुझे नहीं दिया गया है? यदि आपको जंगल में चलना ही है तो क्या आपके आगे काँटों को तोड़कर मैं रास्ता नहीं बनाऊँगी? जब आप जैसे पराक्रमी मेरे साथ होंगे, तो मुझे जंगल में किसी चीज़ का भय नहीं है। जो जंगल में रहनेवालों की रक्षा कर सकता है, क्या मेरी रक्षा नहीं कर
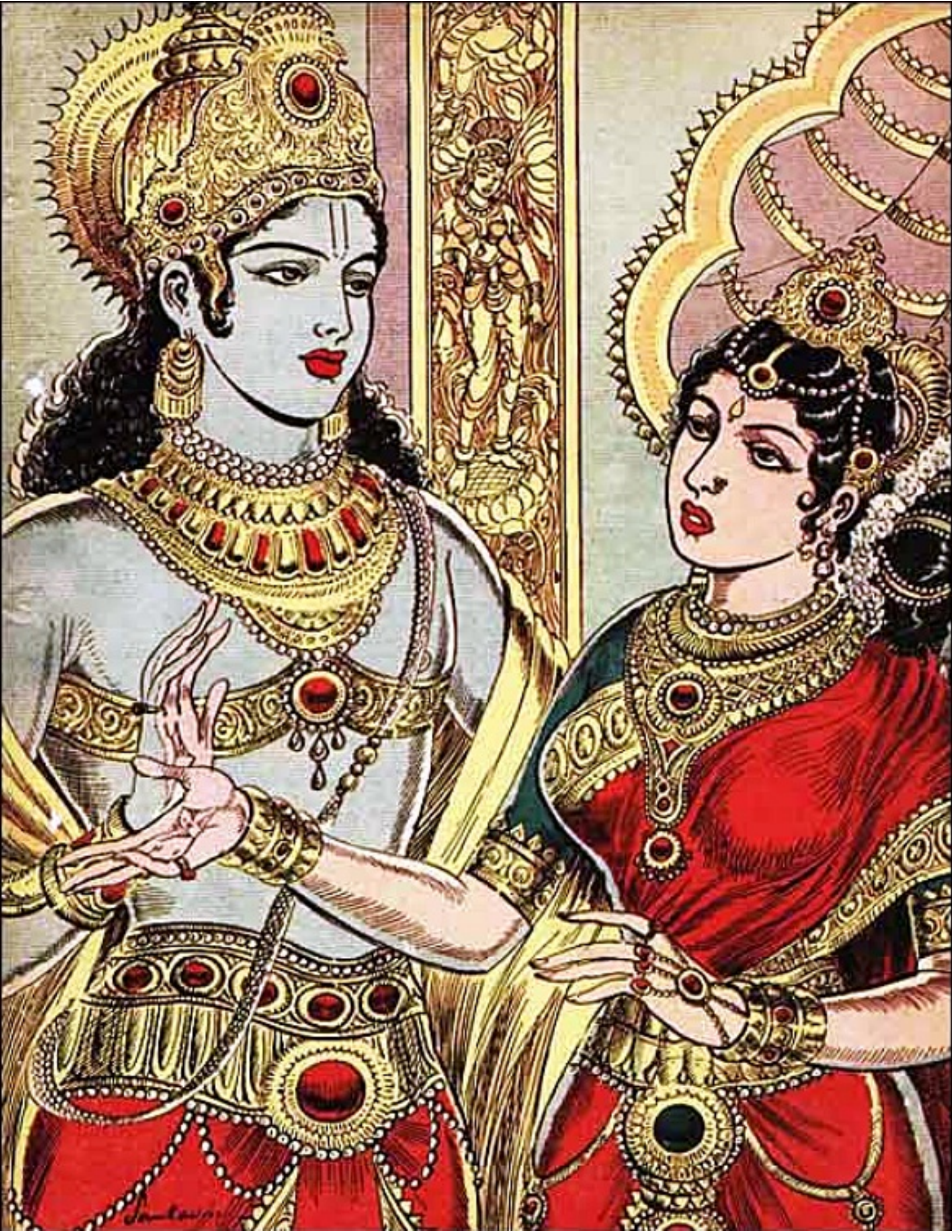
सकता! मैं जंगल में नहीं कहूँगी कि मुझे यह चाहिए या वह चाहिए। आप लाख कहो, पर मेरा इरादा बदलनेवाला नहीं है।"

राम बिल्कुल न चाहते थे कि सीता उनके साथ जंगल में आये और इधर उधर के कष्ट झेलें। उन्होंने कष्टों के बारे में विस्तारपूर्वक बताया, पर सीता ने उनकी परवाह न की। "आपको देखकर ज्योतिषियों ने जैसे लिखा था कि आपके जीवन में वनवास है, वैसे मुझे भी ज्योतिषियों ने बताया था कि मेरे जीवन में भी वनवास है। इसलिए मैं आपके साथ वनवास अवश्य करूँगी।"

तब भी राम उनको साथ ले जाने के लिए नहीं माने। सीता बड़ी दुखी और क्रुद्ध हुईं। उन्होंने राम से कहा—"यदि मेरे पिता जनक महाराजा को यह मालूम हुआ कि उनका दामाद पुरुष रूप में स्त्री है, तो वे क्या सोचेंगे? जो आपको जानते नहीं हैं, वे आपको शूर समझ रहे हैं। आपको भय किस बात का है? मैंने क्या गलती की है कि मुझे छोड़कर जाने की सोच रहे हैं? मेरा आपके सिवाय कोई नहीं है! आपको छोड़कर क्या मैं वंश पर कलंक लगाऊँ? मैंने कहा तो था कि आप जहाँ हैं, वहाँ मेरे लिए स्वर्ग है।" वे यह कहकर रोने लगीं।

राम ने उनके दोनों हाथ लेकर उन्हें सहलाया, फिर उनको वचन दिया कि वे उनको साथ ले जायेंगे। "वनवास के लिए तैयार हो जाओ, जो कुछ तुम्हारे पास है, वह दान कर दो। जो साज-समान है, पहिले नौकर-चाकरों को दे दो, फिर जो बचे ब्राह्मणों को दे दो। सन्यासियों को भोजन दो। भिक्षुकों को दान दो।" सीता खुशी खुशी वह सब करने लगी।

# कमकुरा बुद्ध की मूर्ति

यह जापान में है। इसको ७५० ई. वी. में एक अंगुल मोटे काँसे की परतों से बनाया गया था। इसका माथा चान्दी का बना है। और आँखें सोने की हैं। इसकी ऊँचाई ५० फीट हैं। परिधि ९७ फीट हैं। और भार ४५० टन है। इस बुद्ध को जापान वाले "अमिद" कहते हैं।

## १. श्यामलाल, जमशेदपुर

**क्या आप रामायण के सम्पूर्ण काण्ड प्रकाशित करेंगे?**

हाँ, अभी तो यही इरादा है।

## २. प्रभात सेंगर, राँची

**क्या आप "चन्दामामा" अंग्रेजी में प्रकाशित करेंगे?**

कभी किया था, अभी तो कोई उद्देश्य नहीं है।

## ३. जयवन्त किंटी मार्टिन, कानपुर

**क्या आप बता सकते हैं कि दास और वास अपने कपड़े क्यों नहीं बदलते?**

बदलते हैं, पर शायद कपड़ों का फैशन नहीं बदलता।

## ४. परमेश्वर शर्मा, हिंगनघाट

**क्या आप "हमारे देश के आश्चर्य" दूसरे देशों के आश्चर्य" प्रकाशित करने की कृपा करेंगे?**

हाँ, छाप रहे हैं।

## ५. सन्तोषकुमार गुप्त, खास बाण्डा

**जो आपके हरमाह "चित्र-कथा" में दास वास नाम के बालक छपते हैं, दूसरे नाम के बालक क्यों नहीं छापते?**

यह एक निश्चित स्तम्भ है......निश्चित स्तम्भ में निश्चित नाम ही होते हैं।

६. अवतारसिंह, जमशेदपुर

क्या पंजाबी में चन्दामामा प्रकाशित होता था कि नहीं—अगर नहीं तो होने की सम्भावना है या नहीं?

कभी न हुआ था, न निकट भविष्य में होने की ही सम्भावना है।

७. सत्यवीरसिंह, अतलावत

चन्दामामा में चुटकले, गीत एकांकियाँ क्यों नहीं छापते?

"चन्दामामा" कहानियों की पत्रिका है, इसलिए कहानियों को ही प्रधानता दी जाती है।

८. अजयकुमार, नैनीताल

क्या आप विज्ञान सम्बन्धी लेख चन्दामामा में प्रकाशित करना पसन्द करेंगे?

कभी कभी हम ऐसे लेख देते आये हैं और देते रहेंगे।

९. विजयकुमार मल्लिक, मद्रास-२

चन्दामामा में सबसे पहले कौन-सा धारावाहिक प्रारम्भ हुआ?

"विचित्र जुड़वाँ"

१०. रविनारायण त्रिपाठी, पदमपुर

क्या आप फिर जादू के बारे में लेखमाला प्रकाशित करने की कृपा करेंगे?

हाँ, ऊँचे स्तर के लेख हमें फिर मिल सके तो......।

११. मैत्रेयी, मद्रास-३०

हम सुनते हैं कि "चन्दामामा" के अलावा आप और भी कोई पत्रिका छापने जा रहे हैं?

जरा बताइये तो आपने कहाँ सुना।

Photo by Sundara Murthy
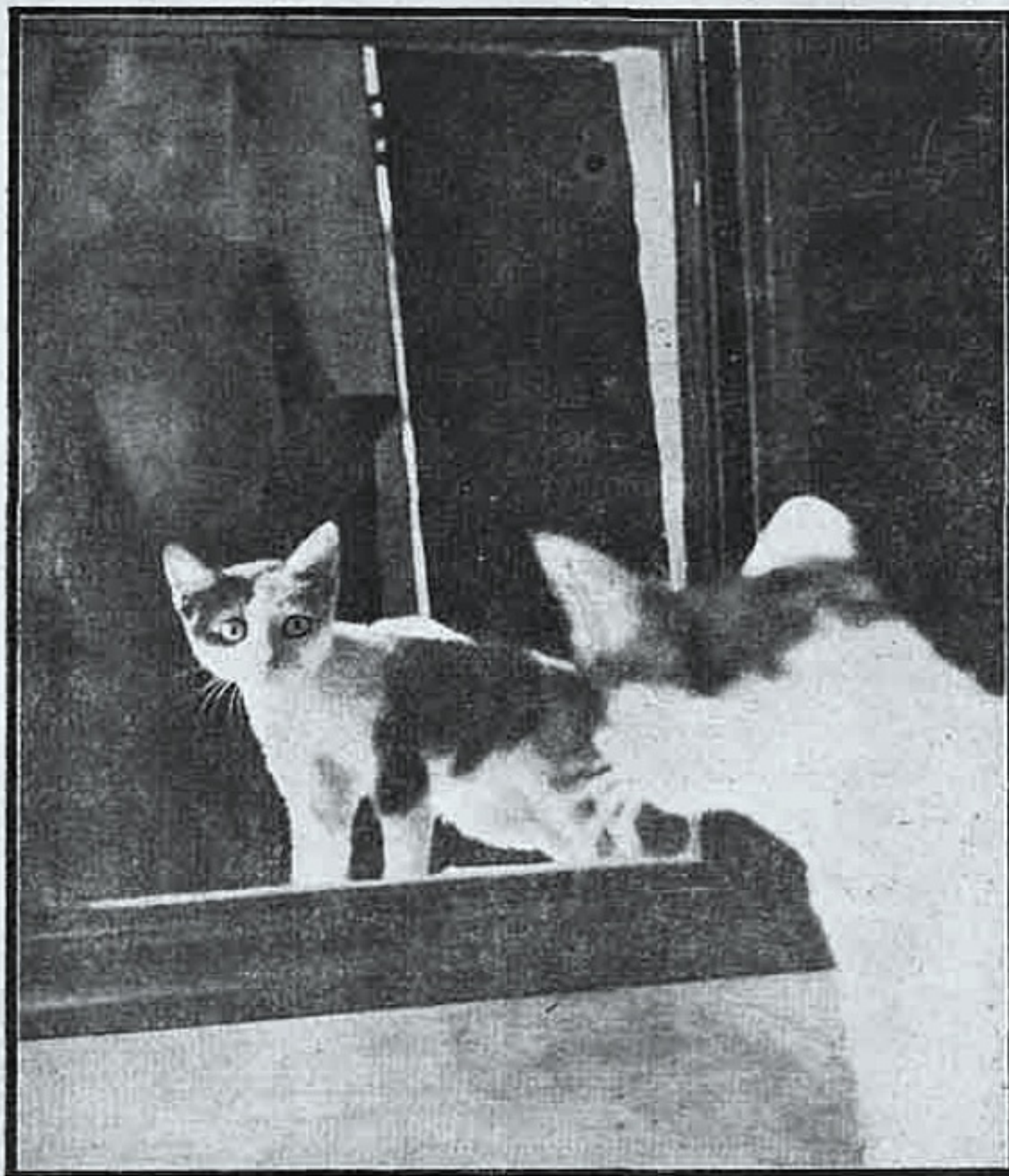
पुरस्कृत परिचयोक्ति

असली भी है, नकली भी है !

प्रेषक : मेघेन्द्रराय पटेल, मुगलसराय

Photo by D. I. Chanthamian

पुरस्कृत परिचयोक्ति

तुम समझो तो ये, एक पहेली भी है!!

प्रेषक : मेघेन्द्रराय पटेल, मुगलसराय

# भूत की बुद्धि

सोलह सौ साल पहिले सून्ग राज्य में वान्ग नाम का एक व्यक्ति बीमार पड़ा। और मर गया। वह भूत होकर अपने ही घर में रहने लगा।

वह लोगों को सिर्फ पाजामा पहिने ही दिखाई देता। कभी कभी मनुष्य की आवाज में बातें करता। सब पर पत्थर और मिट्टी फेंका करता।

यह भूत कुछ समय बाद या के घर रहने लगा। और वहां शोर करने लगा।

उसने एक दिन भूत से कहा—"यदि तुम पत्थर या मिट्टी फेंकते हो तो कोई बात नहीं। पर पैसे मत फेंकना, तेरा भला होगा।"

तुरत भूत ने या पर पैसे फेंके। या ने उन्हें चुन लिया। "ये छोटे सिक्के हैं। कोई बात नहीं। यदि बड़े बड़े मोहरों से पीटते तो क्या होता?"

यह सुनते ही भूत या को सोने के बड़े बड़े सिक्कों से मारने लगा। इस प्रकार पांच छः बार मारे जाने के बाद या ने वे सब मुहरें जमा कर लीं। वह धनी हो गया।

# फ़ोटो - परिचयोक्ति - प्रतियोगिता

अप्रैल १९६२ :: पारितोषिक १०)
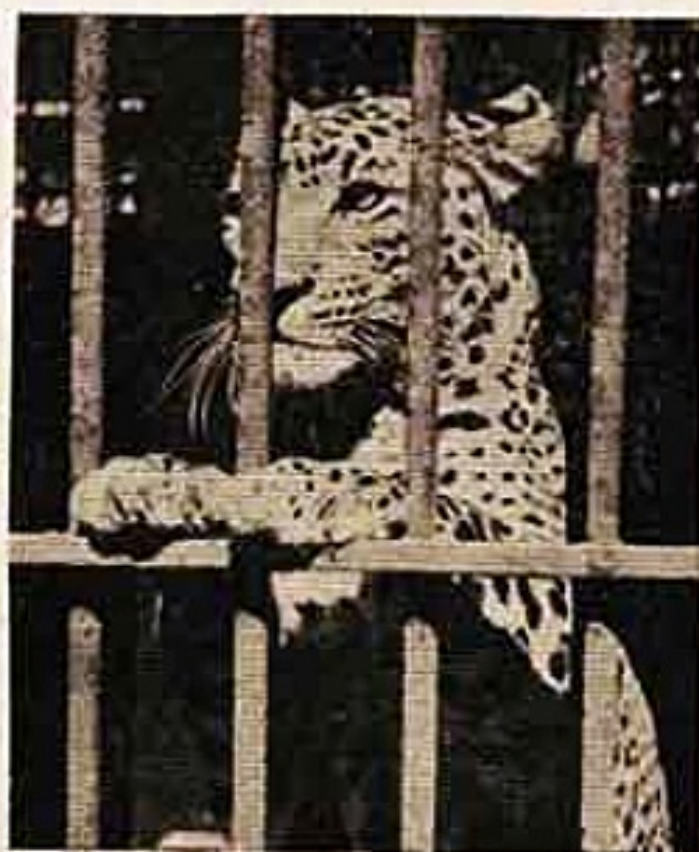
**कृपया परिचयोक्तियाँ कार्ड पर ही भेजें।**

ऊपर के फ़ोटो के लिए उपयुक्त परिचयोक्तियाँ चाहिए। परिचयोक्तियाँ दो तीन शब्द की हों और परस्पर संबन्धित हों। परिचयोक्तियाँ पूरे नाम और पते के साथ कार्ड पर ही लिख कर निम्नलिखित पते पर तारीख ७ फरवरी १९६२ के अन्दर भेजनी चाहिए।

**फ़ोटो - परिचयोक्ति - प्रतियोगिता**
**चन्दामामा प्रकाशन,**
**वड़पलनी, मद्रास-२६**

---

## फरवरी – प्रतियोगिता – फल

फरवरी के फ़ोटो के लिए निम्नलिखित परिचयोक्तियाँ चुनी गई हैं।
इनके प्रेषक को १० रु. का पुरस्कार मिलेगा।

पहिला फ़ोटो : **असली भी है, नकली भी है !**

दूसरा फ़ोटो : **तुम समझो तो ये, एक पहेली भी है !!**

प्रेषक : **मेघेन्द्रराय पटेल,**

C/o श्री मनजी भीमजी परमार, रेल्वे कान्ट्रेक्टर, पो : मुगलसराय, जी : वाराणसी

# अन्तिम पृष्ठ

कृपा, कृतवर्मा, अश्वत्थामा वाहनों पर सवार होकर दक्षिण की ओर गये। पाण्डवों के शिविर के पास एक ऐसी जगह पर, जहाँ कोई आता जाता न था, उन्होंने विश्राम किया। सूर्यास्त के समय वे पासवाले घने जंगल में चले गये। हजार टहनियोंवाले बड़ के पेड़ के नीचे उन्होंने रथ खोले। नित्यकृत्य से निवृत्त होकर उन्होंने विश्राम किया। कृपा और कृतवर्मा जल्दी ही सो गये। अश्वत्थामा क्रोध में आँखें न मूँद सका।

उस बड़ के पेड़ पर हजारों कौवे थे। रात के समय कोई बड़ा-सा उल्लू वहाँ आया। उस उल्लू ने अपने शत्रु कौवों को मार दिया। यह सब अश्वत्थामा ने अपनी आँखों देखा। उसे लगा कि उल्लू उसे बता रहा था कि शत्रु का निर्मूलन कैसे किया जाय। पाण्डवों का आमने सामने खड़े होकर मुकाबला करना आत्महत्या के समान था। यदि मुझे दुर्योधन को दिये हुए अपने वचन को निभाना है, तो अपने शत्रु पाण्डव और पाँचालों को, जब वे सो रहे हों, मारना होगा, उसने सोचा।

अश्वत्थामा ने अपने मामा, कृपाचार्य और कृतवर्मा को उठाकर अपनी इस चाल के बारे में बताया। उसकी इस चाल पर, दोनों ने लज्जा से सिर झुका लिया। कृपाचार्य ने उससे कहा—"सवेरा होने दो, तीनों जाकर पाण्डवों से युद्ध करेंगे।" "नहीं, अभी जाकर, सोते हुए पाण्डवों और पाँचालों को तलवार से मारकर आऊँगा।" अश्वत्थामा ने कहा।

दोनों में कुछ देर विवाद-सा हुआ। कृपाचार्य ने कहा कि ऐसा करना अन्याय था। अश्वत्थामा ने कहा, मुझे अगले जन्म में कीड़ा बनकर पैदा होना स्वीकार है, पर यह काम करके ही रहूँगा। उसने यह भी पूछा कि क्या भीष्म, मेरे पिता, द्रोण, भूरिश्रव, दुर्योधन को इन पाण्डवों ने न्याय से ही मारा है?

उसको क्रूर निश्चय रथ तैयार करता देख कृपाचार्य और कृतवर्मा कवच धारण करके बाण लेकर उसके साथ निकल पड़े। जब वे पाण्डवों के शिविर में पहुँचे, तो वे गाढ़ निद्रा में थे।

अश्वत्थामा दोनों वीरों के साथ जब शिविर के द्वार पर पहुँचा, तो वहाँ एक भूत खड़ा था। उसने शेर की खाल पहन रखी थी। उसके शरीर से ज्वालायें उठ रही थीं। उसके असंख्य हाथों में भयंकर अस्त्र थे। उसके शरीर पर साँप लिपटे हुए थे। उसका मुँह भयंकर था।

उस भूत को देख अश्वत्थामा डरा। उसने उस पर अपने दिव्य अस्त्रों का उपयोग किया। पर यह भूत उन अस्त्रों को निगल गया। उसने एक शक्ति, एक खड्ग, एक गदा, भूत उस पर फेंके। वे सब व्यर्थ गये। अश्वत्थामा निरायुध हो गया। मामा की बात न सुनने का उसे पश्चात्ताप हुआ।

Printed by B. NAGI REDDI at the B. N. K. Press Private Ltd., and Published by B. VENUGOPAL REDDI for Sarada Binding Works, 2 & 3, Arcot Road, Madras-26. Controlling Editor: 'CHAKRAPANI'